ओ३म्

आयुर्वेदीययन्त्रशस्त्रपरिचयः

(सुश्रुतवाग्भटाद्याश्रितः सचित्रश्च)

Ayurvedic Surgical Instruments

— लेखकौ —

आयुर्वेदाचार्य पं० सुरेन्द्रमोहन बी० ए०

(भू० पू० प्रिंसीपल, दयानन्दायुर्वेदिक कालेज, लाहौर)

तथा

श्री सत्येन्द्रनाथ बी० ए० (आनर्स)

—:०:—

—: प्रकाशक तथा प्राप्तिस्थान :—

इन्द्रायुर्वेद-भवन

करोल बाग, नई देहली ।

प्रथम वार २००० प्रति	४ फाल्गुण सं० २००७ वि० १५ फरवरी १९५१ ई०	मूल्य १॥) प्रति डाकव्यय पृथक्

पूर्ववचन (Foreword)

पं० रामगोपाल जी शास्त्री, मन्त्री, नि० भा० आयुर्वेदविद्यापीठ, के परामर्श से यह पुस्तक विद्यापीठ के परीक्षार्थियों तथा अन्य संस्थाओं के छात्रों के लाभार्थ लिखा गया है। एतदर्थ मुझे निजानुभव के अतिरिक्त निम्न ग्रन्थ देखने पड़े हैं :—

(१) सुश्रुतसंहिता (सटीक)—श्री आचार्य त्रिकमजी यादवजी द्वारा सम्पादित (१६१५ ई०)

(२) सुश्रुतसंहिता (सूत्रस्थान)— डा० भास्कर गोविन्द घाणेकर द्वारा अनुवादित।

(३) **Surgical Instruments of the Hindus**—by Dr. G. N. Mukhopadhyaya (Cal. University).

(४) **A Guide to Surgical Instruments.**

इस संबन्ध में डा० राजाराम तथा डा० बी० आर० गुप्त से मैं समय २ पर सहायता लेता रहा हूं। तदर्थ उनको हार्दिक धन्यवाद देता हूं। इस कार्य में श्री सत्येन्द्रनाथ बी० ए० (आनर्स) ने चित्रनिर्माण, ग्रन्थसम्पादन और प्रूफसंशोधन में मेरी पूर्ण सहायता की है।

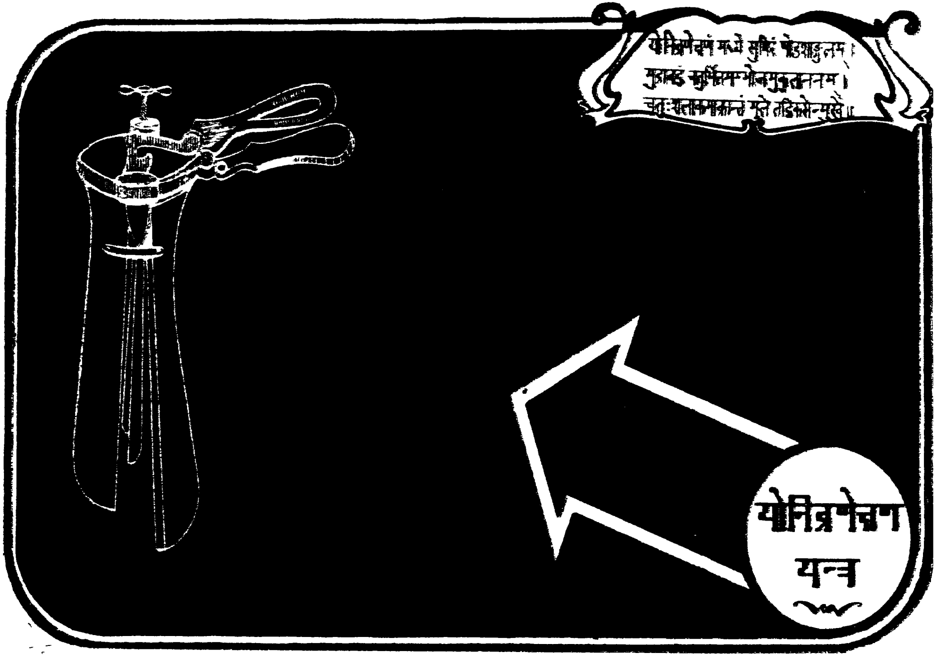
यदि यह परिश्रम छात्रों तथा वैद्यों के लिए तनिक भी लाभप्रद सिद्ध हो, तो मैं अपने आपको कृतकृत्य समझूंगा। विद्वानों से याचना है, कि यदि कोई त्रुटि वा मिथ्याभाव इस पुस्तक में दृष्टिगोचर हो, तो मेरे ध्यान में लावें, यतः मैं अगले संस्करण में उसे ठीक कर सकूं। इस के लिए मैं उनका कृतज्ञ हूंगा।

इन्द्रायुर्वेदभवन
करोलबाग, नई देहली।

आयुर्वेदहितेच्छुक—
सुरेन्द्रमोहन आचार्य

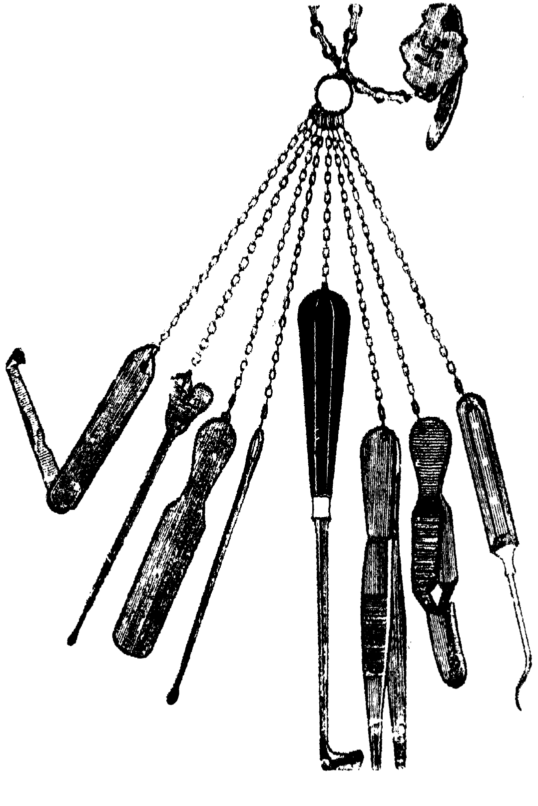
विषयसूची (Contents)

तृतीयोऽध्यायः (**Miscellaneous Instruments**)



Vaginal Speculum, as described by **Vagbhata** (500 A. D.).

आयुर्वेदीय-यन्त्रशस्त्र-परिचयः



कतिचित्प्रायोगिकयन्त्रशस्त्राणां सुसंचयः ।

A Collection of Surgical Instruments of Every Day Use.

ओ३म्

आयुर्वेदीय-यंत्रशस्त्र-परिचयः

(सुश्रुत-वाग्भटाद्याश्रितः सचित्रश्च)

(Ayurvedic Surgical Instruments)

प्रथमोऽध्याय (यन्त्रप्रकरणम्)

Blunt Instruments

१. यन्त्रलक्षणम्

मनःशरीराबाधकराणि शल्यानि । तेषामाहरणोपायो यन्त्राणि ॥४॥
(सु० सूत्र० अ० ७)

शल्य मन और शरीर को दुःख (पीड़ा) देते हैं। उनके आहरण (निष्कासन—Extraction) करने वाले उपायों का नाम यन्त्र[1] है।

वक्तव्य—'शल्य' शब्द शल् (तीव्रगतौ) धातु से बनता है। ['शल' 'श्वल' आशुगमने धातुः; तस्य शल्यमिति रूपम् ॥३॥] (सु० सू० अ० २६)—'शलतीति शल्यम्' इस निर्वचन के अनुसार तीव्र गति से

---

१. सुश्रुत की अपेक्षा श्री वाग्भट ने यन्त्र का आशय अधिक स्पष्ट किया है, यथा—"नानाविधानां शल्यानां नानादेशनिवेशिनाम्। आहृतावभ्युपायो यस्तद् यन्त्रं यच्च दर्शने ॥२॥ अर्शोभगन्दरादीनां-

शरीर में बाण, गोली, कण्टकादि का प्रवेश करना ही 'शल्य' का बोधक है। आङ्गलभाषा में शल्य को Foreign body or extraneous substance (बाह्य वस्तु) कहते हैं। यह शोथ, शूलादि उत्पन्न करके न केवल दुःख देते हैं, प्रत्युत प्राणहानि वा जीवन-नाश का भी कारण बनते हैं। अतः उनका तुरन्त निकालना अनिवार्य समझते हुए ऋषियों ने यन्त्र (Instruments) रचे। "यम्यते नियम्यते (अनेन) इति यन्त्रम्" (अरुणदत्तः)-अर्थात् जिससे शल्य को यन्त्रित वा नियन्त्रित (काबू) करके बाहर निकाला जा सके, उसे यन्त्र (A mechanism or contrivance) कहते हैं। यन्त्र पुनः दो प्रकार के हैं, (१) स्थूलमुखी (Blunt instruments)–इन्हें हमारे आचार्यों ने यन्त्र संज्ञा दी है; यह केवल यन्त्रण करते हैं, जैसे जंबूर, चिमटी आदि। (२) सूक्ष्ममुखी वा तीक्ष्णधार (Sharp Instruments)–यह छेदन, भेदन, पाटन (चीरफाड़) आदि क्रिया करते हैं, यथा चाकू, आरी, कैंची आदि। इन्हें शल्यशास्त्र में शस्त्र (शातने–Cutting) संज्ञा दी गई है। इस अध्याय में केवल यन्त्रों का ही वर्णन होगा।

शस्त्रक्षाराग्नियोजने । शेषाङ्गपरिरक्षायां तथा बस्त्यादिकर्मणि । घटिकालाबुश्रृंगश्च जांबवोष्ठादिकानि च" ॥३॥ (अ० हृ० सू० अ० २५)—अर्थात् यन्त्र वह हैं, जो शरीर के भिन्न २ भागों में प्रविष्ट नानाविध शल्यों को अपहृत करने; रोगपरीक्षार्थ; अर्श, भगन्दरादि में शस्त्र, क्षार, अग्नि के प्रयोगार्थ; शेष अंगों की रक्षार्थ और वस्ति आदि कर्मों में व्यवहार किये जाते हैं। घटिका, अलाबु, श्रृंग और जांबवोष्ठादि भी यन्त्रान्तर्गत समझने चाहियें। इनकी व्याख्या समय २ पर आगे की जावेगी।

२. यन्त्रसंख्या।

यन्त्रशतमेकोत्तरं; अत्र हस्तमेव प्रधानतमं यन्त्राणामवगच्छ, (किं कारणं ? यस्माद्धस्तादृते यन्त्राणामप्रवृत्तिरेव) तदधीनत्वाद्यन्त्रकर्मणाम् ॥३॥

(सु० सू० अ० ७)

यन्त्र १०१ हैं।* उनमें हाथ प्रधानतम (मुख्य–Chief) है, (क्यों ? इसलिये कि हाथ के बिना यन्त्रों का संचालन नहीं हो सकता) यन्त्रों के कर्म (प्रयोग) हाथ के ही अधीन हैं।

वक्तव्य—यहां 'शत' शब्द को १०० के अर्थ में नहीं लेना चाहिये, अपितु उसे 'अनन्त' वाचक समझें। यन्त्रों की कोई नियत संख्या नहीं हो सकती। आवश्यकतानुसार वे घटाये और बढ़ाये जा सकते हैं, जो शल्यकर्मज्ञों के अनुभव पर निर्भर है। यन्त्रों में प्रधानता मानव-हस्त (Human hand) को दी गई है, परन्तु यहां हस्त से अभिप्राय सिद्ध हस्त (Skilled hand) लेना चाहिये। शल्यकर्म में प्रवीण वैद्य (Surgeon–धन्वन्तरि) का ही हाथ यहां अभिप्रेत है। यन्त्रों वा शस्त्रों को सुचारु रूप से दक्ष शल्यकर्मज्ञ ही चला सकता है, न कि

---

*. इस विषय में वाग्भट के वचन देखिये—"अनेकरूपकार्याणि यन्त्राणि विविधान्यतः। विकल्प्य कल्पयेद् बुद्ध्या यथास्थूलन्तु वक्ष्यते ॥४॥ (अ० हृ० सू० अ० २५)—"यन्त्र अनेक आकृतियों और कार्यों के कारण विविध प्रकार के होते हैं, अतः शस्त्रकर्मज्ञ वैद्य उन्हें (आवश्यकतानुसार) विविधरूप से कल्पना करके बुद्धिपूर्वक बनवावे। अब स्थूल रूप से उनका वर्णन करेंगे"। एवं श्री वाग्भट ने १०१ यन्त्र संख्या का निर्देश नहीं किया, अपितु जो २ यन्त्र सुश्रुत ने बताये हैं, उनसे अधिक कई यन्त्र वाग्भट ने लिखे हैं, यथा मुचुण्डी, योनिव्रणेक्षण यन्त्र, गर्भशंकु आदि २। आजकल किसी बड़े आतुरालय के शल्य-विभाग (Surgical Deptt.) में जाकर देखो कि वहां कितने यन्त्र-

अज्ञ मनुष्य ।१

३. यन्त्राणां षड्विधत्वम् ।

तानि षट्प्रकाराणि; तद्यथा—स्वस्तिकयन्त्राणि, संदंशयन्त्राणि, तालयन्त्राणि, नाडीयन्त्राणि, शलाकायन्त्राणि, उपयन्त्राणि चेति ॥५॥

(सु० सू० अ० ७)

वे छः प्रकार के हैं, यथा—(१) स्वस्तिक यन्त्र, (२) संदंश यन्त्र, (३) ताल यन्त्र, (४) नाडी यन्त्र, (५) शलाका यन्त्र और (६) उपयन्त्र।

टिप्पणी—यह यन्त्रों के स्थूल विभाग (Main divisions) समझें। प्रत्येक प्रकार में छोटे बड़े वा अन्य कई भेदों से अनेक यन्त्र हो सकते हैं, जैसा कि अगले पृष्ठों के अध्ययन से ज्ञात होगा।

शस्त्र हैं? शरीर के विशेष २ अंगों (नेत्र, कर्ण, नासा, मुख, मूत्राशयादि) के लिये पृथक् २ अनेक यन्त्र हैं।

१. आजकल चिकित्सकों के प्रायः दो सम्मप्रदाय—Physicians and Surgeons हैं। Physicians के लिये वैद्य, भिषक्, चिकित्सकादि शब्द तो ठीक हैं, परन्तु Surgeons को क्या कहें? मेरे विचार में 'धन्वन्तरिः' शब्द ही समीचीन है-इसका अर्थ डल्हण ने यों किया है—"धन्वं शल्यशास्त्रं तस्यान्तं पारम् इयर्ति गच्छति इति धन्वन्तरिः" (डल्हणः)—धन्व का अर्थ है शल्यशास्त्र (Surgery); जो शल्यशास्त्र में प्रवीण हो, उसे धन्वन्तरि (Surgeon) कहते हैं, अर्थात् 'शल्यशास्त्रपारगः'। इस विषय में हमें चरक का भी प्रमाण मिलता है, यथा "अतः परं च कर्म धान्वन्तरीयाणाम्" (च० चि० अ०) अर्थात् इसके पश्चात् धान्वन्तरियों (Surgeons) का अधिकार है, नकि चिकित्सकों का। कार्यचिकित्सक और शल्यचिकित्सक, ऐसा भी विभाग वैद्य प्रायः करते हैं।

४. प्रकारभेदेन यन्त्रसंख्या ।

तत्र चतुर्विंशतिः स्वस्तिकयन्त्राणि, द्वे संदंशयन्त्रे, द्वे एव तालयन्त्रे, विंशतिर्नाड्यः, अष्टाविंशतिः शलाकाः, पञ्चविंशतिरुपयन्त्राणि ॥६॥

(सु० सू० अ० ७)

उनकी संख्या इस प्रकार है—(१) स्वस्तिक यन्त्र २४, (२) संदंश यन्त्र २, (३) तालयन्त्र २, (४) नाडीयन्त्र २०, (५) शलाका यन्त्र २८ और (६) उपयन्त्र २५ ।

वक्तव्य—एवं यन्त्रों की समस्त संख्या[1] १०१ बनती है, परन्तु आवश्यकतानुसार यह न्यूनाधिक हो सकती है । स्वस्तिकयन्त्रादि की व्याख्या आगे देखें ।

५. यन्त्रद्रव्यनिर्देशः ।

तानि प्रायशो लौहानि भवन्ति, तत्प्रतिरूपकाणि वा तदलाभे ॥७॥

(सु० सू० अ० ७)

यन्त्र प्रायः लोहादि धातुओं से बनते हैं । यदि धातु न मिले, तो तत्सदृश अन्य वस्तुओं (काष्ठ, वेणु, शृंग, हस्तिदन्तादि) से भी बनाये जा सकते हैं ।

वक्तव्य—यहां 'लौह' शब्द केवल लोह (Iron) के अर्थ में ही नहीं, अपितु स्वर्ण, रजत, ताम्रादि सप्तधातु-वाचक है । फिर भी लोह की प्रधानता समझनी चाहिये । लोह के पुनः कई प्रकार होते हैं, उनमें से यन्त्रों वा शस्त्रों के निर्माण में प्रायः शस्त्रलोह (फौलाद-Steel) प्रयुक्त होता है । जितना उपयोगी लोह धातु है, उतना उपयोगी अन्य

१. अष्टांगहृदय में यन्त्रों के प्रकार अथवा संख्यावाचक कोई वचन नहीं मिलते, तथापि उसमें सुश्रुतानुसार स्वस्तिकादि यन्त्रों का वर्णन क्रमशः मिलता है । उससे ही गणना हो सकती है ।

कोई भी धातु नहीं[१]। इसका कारण लोह की दृढ़ता, कठोरता और तीक्ष्ण धारा है। अन्य धातुओं में मृदुता (जैसे स्वर्ण में), भंगुरता (जैसे यसद में) आदि दोष पाये जाते हैं। जलवायु के प्रभाव से भी वे शीघ्र दूषित हो जाते हैं, यथा ताम्र और रजत। लोहमय यन्त्रों को जल और वायु के प्रभाव से बचाने के लिये आजकल निकल धातु का आवरण (Nickel-Plating) कर दिया जाता है। यन्त्रों के निर्माण में लोह के अतिरिक्त अन्य धातु, हस्तिदन्त, काष्ठ, वेणु, शृंग, काच, अस्थि, रबरादि का भी व्यवहार होता है।

६. यन्त्राकृतिनिरूपणम्।

तत्र नानाप्रकाराणां व्यालानां मृगपक्षिणां मुखैर्मुखानि यन्त्राणां प्रायशः सदृशानि; तस्मात् तत्सारूप्यादागमादुपदेशादन्ययन्त्रदर्शनाद्युक्तितश्च कारयेत्॥८॥ (सु० सू० अ० ७)

यन्त्रों के मुख (अग्रभाग-Face, Head) प्रायः व्याल (हिंस्र) मृगों (सिंह, व्याघ्रादि पशुओं), और पक्षिओं (काक, श्येन, कंकादि) के मुख के तुल्य हुआ करते हैं, अतः यन्त्रों का निर्माण पशु पक्षियों के सदृश, आगम (शास्त्र) के अनुसार, (वृद्ध वैद्यों के) उपदेश से, अन्य यन्त्रों के देखने से और युक्ति (स्त्री, पुरुष, बाल, वृद्धादि के विचार) से करावे॥

१. इस विषय में श्री वाग्भट की संक्षिप्त तथा स्पष्टोक्ति ध्यान में रखिये-"आयसानि च भूरिशः" (अ० हृ० अ० २५ श्लोक ६) -अर्थात् यन्त्र भूरिशः (प्रायः, अधिकतर) आयस (लोह के) होने चाहियें। अरुणदत्त ने पुनः 'आयस' का अर्थ 'शस्त्रमय' अर्थात् शस्त्रलोह (फौलाद-Steel) युक्त कह कर और भी स्पष्ट कर दिया है।

वक्तव्य—हिंसक पशुओं और पक्षियों के मुख के तुल्य यन्त्रनिर्माण का उपदेश ऋषियों ने इसलिये किया है, कि जिस प्रकार पशु, पक्षी, मकर, सर्पादि शिकार को अपने जबड़ों (Jaws) से जकड़ लेते हैं, इसी प्रकार सिंहमुख, व्याघ्रमुख, कंकमुख, काकमुखादि यन्त्र भी शल्य को दृढ़ता से ग्रहण करके बाहर निकाल सकें। पशु-पक्षी-व्यालमुख के सादृश्य का भाव यहां उनकी आंखों, नाक वा कान से नहीं, प्रत्युत दन्त, दंष्ट्र, हनु और जंभ (जबड़े) से है, जिनके द्वारा शिकार काबू किया जाता है। एवं यन्त्रों के मुख भी खर तथा दन्तादियुक्त (Dentated) होने चाहियें, जिनसे वह शल्य को ग्रहण कर सकें। एतदर्थ आप सिंहमुख यन्त्र (Lion Forceps) को देखें (चित्र संख्या १)।

७. यन्त्रनिर्माणविधिः।

समाहितानि यन्त्राणि खरश्लक्ष्णमुखानि च।
सुदृढानि सुरूपाणि सुग्रहाणि च कारयेत् ॥६॥
(सु० सू० अ० ७)

यन्त्र सुसमाहित (ठीक परिमाण-Size—लम्बाई चौड़ाई वाले), भीतर से खर (खुर्दरे—rough, सदन्तुर आदि), बाहर से श्लक्ष्ण (मसृण, मृदु-polished, smooth) मुख वाले, सुदृढ़ (मज़बूत, पक्के-strong), सुरूपाणि (अच्छे रूप वाले, आकर्षक) और सुग्रह (अच्छे ग्रहस्थान—दस्ता, मुष्टि-handle-युक्त, पकड़ने के लिये) बनवाने चाहियें।*

वक्तव्य—यन्त्रों के गुण अति सुन्दर शब्दों में सुश्रुत ने वर्णन किये हैं। यन्त्रनिर्माण का कार्य दक्ष और अनुभवी लोहकारों से सुश वैद्यों (धान्वन्तरियों) के निरीक्षण में कराना चाहिये। पश्चिमी देशों में

*यन्त्रनिर्माण-सम्बन्धी वाग्भट के सुवचन "अनेकरूपकार्याणि…… ……कल्पयेद् बुद्ध्या……" हम पीछे उद्धृत कर चुके हैं।

शल्यसंबन्धी यन्त्रों वा शस्त्रों के निर्माणार्थ बड़ी २ कर्मशालायें (workshops) हैं, परन्तु भारत में अभी तक यह कार्य उचित रीति से प्रारंभ नहीं हुआ।

८. स्वस्तिकयन्त्राणि (Forceps)।

तत्र स्वस्तिकयन्त्राणि अष्टादशांगुलप्रमाणानि; सिंहव्याघ्रवृकतरक्ष्वृक्षद्वीपिमार्जारशृगालमृगैर्वारुककाककंककुररचासभासशशघात्युलूकचिल्लिश्येनगृध्रक्रौञ्चभृङ्गराजाञ्जलिकर्णावभञ्जननन्दिमुखमुखानि, मसूराकृतिभिः कीलैरवबद्धानि, मूलेऽङ्कुशवदावृत्तवारङ्गाणि, अस्थिविदष्टशल्योद्धरणार्थमुपदिश्यन्ते* ॥१०॥

स्वस्तिक यन्त्र १८ अंगुल (लम्बे) होने चाहियें। उनका मुख (अग्रभाग-head) सिंह (lion-शेर), व्याघ्र (बघियार, बाघ tiger), वृक (भेड़िया-wolf), तरक्षु (लकड़बगड़ वा चर्ख-hyena), ऋक्ष (रीछ-bear), द्वीपि (चित्रव्याघ्र, चीता-panther), मार्जार (विडाल, बिल्ली-cat), शृगाल (गीदड़ jackal), मृगैर्वारुक (हरिण-deer), काक (crow), कंक (कङ्कमल्लो दीर्घचञ्चुर्महाप्रमाणः,

*स्वस्तिक यन्त्रों के सम्बन्ध में श्री वाग्भट के वचन तुलनात्मक दृष्टि से देखिये—"तुल्यानि कङ्कसिंहर्क्ष—काकादिमृगपक्षिणाम्। मुखैर्मुखानि यन्त्राणां कुर्यात्तत्संज्ञकानि च ॥३॥ अष्टादशांगुलायामान्यायसानि च भूरिशः। मसूराकारपर्यन्तैः कण्ठे बद्धानि कीलकैः॥६॥ विद्यात् स्वस्तिकयन्त्राणि मूलेऽङ्कुशनतानि च। तैर्दृढैरस्थिसंलग्न—शल्याहरणमिष्यते ॥७॥ (अ० हृ० सू० अ० २५)—यन्त्रों के मुख (अग्रभाग—'येन पार्श्वेन शल्यमुद्ध्रियते तद्यन्त्राणां मुखं वेद्यम् इत्यरुणदत्तः) कङ्क, सिंह, ऋक्ष, काकादि पक्षियों और मृगों के मुखों के तुल्य बनावे और उनका नाम भी तत्संज्ञक होना चाहिये, यथा कङ्कमुख, सिंहमुखादि। १८ अंगुल लम्बे और बहुधा आयस (लोहकृत) होने चाहियें। कण्ठ-

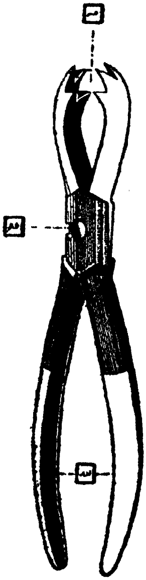
सुरमासुत इत्यन्ये-डल्हणः, दीर्घ चोंच और बड़े आकार वाला पक्षी-विशेष, किसी के विचार में बगला-heron), कुरर [चिरिल्लाकारः नादोत्थापितमत्स्यः, 'कुरल' इति लोके (डल्हणः)—टिटिहरी, the fishing eagle, osprey],चास (बहरी·blue jay, चांह पंजाबी में)' भास (गोकुलचारी गृध्रविशेषः डल्हणः), शशघाती (शशारि इति लोके, हिंस्रपक्षीविशेष), उलूक (उल्लू·owl), चिल्लि (चील·kite), श्येन (बाज़, शिकरा·hawk), गृध्र (गीध-vulture—गृध्रो महाप्रमाणः स योजनदृष्टिरामिषाशी चेति डल्हणः), क्रौञ्च (कूंज, कूंजां पंजाबी, curlew), भृङ्गराज ('काञ्चचटक' इति पारियात्रीयः—डल्हणः; कृष्णवर्ण का एक चटकसमान पक्षी, फसली बटेरा), अञ्जलिकर्ण, अवभंजन [अञ्जलिकर्णावभञ्जनयोः सुश्रुतचरकादिटीकासु पर्यायो न दृश्यते तस्माद् देशान्तरे लोकादवगन्तव्यम् (डल्हणः)—अर्थात् इन दो पक्षियों के

अर्थात् मध्य में (दोनों फलकों को) मसूराकार कील से जोड़ देना चाहिये। ऐसे यन्त्रों को स्वस्तिक यन्त्र कहते हैं। मूल में (यत्र प्रदेशे यन्त्राणां हस्तग्रहस्तत्र तन्मूलमित्यरुणदत्तः) अंकुश (hook) की तरह नत (वक्र, मुड़े हुए) हों। उन दृढ़ यन्त्रों से अस्थियों में फंसे हुए शल्य निकाले जाते हैं। यहां वाग्भट ने सुश्रुतोक्त सब पशु, पक्षियों के नाम नहीं दिये। केवल पक्षियों में काक और कंक, और पशुओं में सिंह और ऋक्ष (रीछ) का नाम दिया है। शेष आदि शब्द के अन्तर्गत समझने चाहियें। वैसे मुख्य तो सिंहमुख और कंकमुख ही हैं, जिनके चित्र हमने इस पुस्तक में दे दिये हैं। श्री वाग्भट ने 'कण्ठ' शब्द देकर प्रकृष्ट बुद्धिमत्ता का प्रकाश किया है। यह यन्त्र का वह भाग है, जहां कील (Nail) लगता है – इससे यन्त्र दो भागों में विभक्त हो जाता है, (१) छोटा भाग, जिसे मुख कहा गया है और (२) मूल, जहां से पकड़ा जाता है। इसे अरुणदत्त ने हस्तग्रह (दस्ता-handle) कहा है। पहिला-

पर्याय (नामान्तर) सुश्रुत, चरकादि की टीकाओं में नहीं मिलते, अतः दूसरे देशों के लोगों से जानने का प्रयत्न करें],नन्दिमुख (पत्राटी-डल्हणः)- इन २४ पशुपक्षियों (६ पशुओं और १५ पक्षियों) के मुखों के सदृश यन्त्रमुख होने चाहियें। मसूराकार कीलों से यह यन्त्र अवबद्ध (जुड़े हुए) हों। इनका मूल (पकड़ने का स्थान—handle) अंकुश की तरह मुड़ा हुआ अथवा गोल होना चाहिये। यह यन्त्र अस्थिविदष्ट (हड्डी में गड़े हुए, गंभीर) शल्यों के उद्धरणार्थ (निष्कासनार्थ) प्रयुक्त होते हैं।

स्वस्तिक यन्त्रों की आकृति और संज्ञा—स्वस्तिक यन्त्र दृढ़ लोह के दो फलकों (Blades) वा स्थूल दण्डों से बनते हैं। इन फलकों के मध्य में एक दृढ़ कील [Nail] लगा रहता है, जिसके दोनों सिरे मसूराकार गोल, स्थूल वा टोपीयुक्त (capped) होते हैं, ताकि फलक पृथक् न हो सकें। जहां कील होता है, उस स्थान को वाग्भट ने कण्ठ कहा है। कण्ठ फलकों के ठीक मध्य में नहीं होता, प्रत्युत वह स्वस्तिक-यन्त्र को दो विषम भागों में विभक्त कर देता है। उसका अग्रभाग जिसे मुख (head) कहते हैं, छोटा होता है और मूल भाग (ग्रहणस्थान, हस्तग्रह, मुष्टि, वारङ्ग—handle, दस्ता)

भाग (मुख-head) छोटा होता है और दूसरा भाग (मूल-handle) बड़ा होता है। दूसरा भाग जितना बड़ा हो, मुख उतनी दृढ़ता से शल्य को पकड़ता है। जिस प्रकार प्राणियों में शिरोभाग के नीचे कण्ठ होता है, उसी प्रकार यन्त्रों के मुख के समीप वा नीचे कण्ठ होना चाहिये (देखो चित्र १, २)। एवं धड़ की तरह हस्तग्रह लम्बा होना चाहिये।



चित्र १ सिंहमुख

१. मुख, २. कील
३. वारङ्ग

बड़ा (देखो चित्र १ में मुख १, कील २, और मूल ३)। जब स्वस्तिक यन्त्र को खोला जावे, तो फलक पृथक् होकर ४ भाग दीखते हैं। उस समय यह स्वस्तिक यन्त्र श्री गणेश के मंगल चिह्न[1], ईसा के क्रास वा सूली (वस्तुतः शूली †)[2] और हिटलर-प्रचलित जर्मनी के ध्वज स्वस्तिका (Swastika 卐) के सदृश (चतुरङ्गी) प्रतीत होता है। इसी कारण ही इन यन्त्रों की संज्ञा स्वस्तिक (कल्याणकारी) रखी गई है। स्वस्तिवाचन मन्त्रों का भी यही भाव है। शल्य को उद्धृत करके यह रोगी का कल्याण करता है, अतः स्वस्तिक संज्ञा सार्थक है।

स्वस्तिक यन्त्रों को देशी भाषा में जंबूर (फारसी ज़म्बूर) और आङ्गल भाषा में Forceps (फौर्सैप्स) वा पिनसर्स § कहते हैं।

नामकरण विधि और प्रकार—जिस प्राणी के मुख के सदृश जो यन्त्र हो, वही उसका नाम जानें, यथा सिंहमुख (Lion Forceps), काकमुख (Crow Forceps), श्येनमुख (Hawk Forceps) आदि २। ऋषियों ने यह

१ ॐ की वक्र रेखायें सीधी कर दी जावें, तो भी स्वस्तिकाकृति बन जाती है।

२ ईसा जगत् के कल्याणार्थ सूली पर चढ़ा था।

§ Pincers—a gripping tool with short jaws, or pliers (पलास)–like.

यन्त्र अपने नाम पर प्रसिद्ध न करते हुए प्राणियों के नाम पर प्रसिद्ध किये, ताकि उनकी आकृति सदैव समझ में आ सके। उन्हें अपने नाम की इच्छा न थी। तद्विपरीत आजकल आविष्कार वा अन्वेषण करने वाले महाशय यन्त्रों, शस्त्रों वा औषधों को निज नाम पर प्रसिद्ध करने की चेष्टा करते हैं, यथा—Kocher's Gland Forceps, Volkmann's Sharp Spoon (मण्डलाग्र), Syme's Knife, Dover's Powder, etc.। कुछ नाम क्रिया, रोग, आकार वा स्थान पर आश्रित हैं, यथा Artery Forceps (धमनीग्राही स्वस्तिक यन्त्र), Nasal Forceps (नासास्वस्तिका), Dental Forceps (दन्तस्वस्तिका) आदि २। इस प्रकार हमारे यहां भी गर्भशंकु, मण्डलाग्र, अर्शोयन्त्रादि शब्द मिलते हैं। कहीं २ पाश्चात्यों ने भी पशुपक्षियों के नाम पर यन्त्रों के नाम रखे हैं, यथा Lion Forceps (सिंहमुखी), Mouse-teeth Forceps (मूषिकमुखी), Bulldog Forceps (श्वामुख यन्त्र), Hawk-bill Forceps (श्येनमुख यन्त्र), Crocodile Forceps (मकरमुख यन्त्र) इत्यादि।

सुश्रुतोक्त २४ स्वस्तिक यन्त्रों में सिंह से मृगेर्वारुक तक ६ यन्त्र तो पशुओं के नाम पर प्रसिद्ध हैं और शेष १५ पक्षियों के नाम पर। पशुओं के मुख स्थूल होने से तदाकार यन्त्र प्रायः स्थूल और दृश्य (Visible) शल्यों के पकड़ने वा निकालने के काम में आते हैं और पक्ष्याकार यन्त्रों के मुख पक्षियों की चोंच की तरह लम्बे और पतले होने से गूढ़ और अदृश्य (Deep and invisible) शल्यों के ग्रहण तथा निष्कासनार्थ प्रयुक्त होते हैं।

‡ छात्रों को पशुपक्षियों के परिचयार्थ किसी जन्त्वालय (चिड़िया-घर-Zoo) में जाना चाहिये।

सुश्रुत ने जिन पशुपक्षियों का नाम स्वस्तिक यन्त्रों के वर्णन में दिया है, उनमें से बहुत से तो प्रसिद्ध और सुविदित हैं, यथा सिंह, व्याघ्र, वृक, तरक्षु,* काक, गृध्र, श्येनादि और कुछ संदिग्ध वा अज्ञात हैं, यथा मृगैर्वारुक, कंक, अञ्जलिकर्णादि, जिनके विषय में डल्हण ने भी सन्देह वा अज्ञान प्रकट किया है। ‡ हो सकता है, कि जो पशु-पक्षी सुश्रुत के समय में थे, उनमें से कुछ डल्हण के काल तक नष्ट हो गये हों और उसके पश्चात् भी कुछ लुप्तप्राय हो चुके हों वा देशान्तर को चले गये हों। ध्यान रहे कि जन्तुविज्ञान (Zoology) के अनुसार समय के प्रभाव से प्राणियों की कतिपय जातियां नष्ट (Extinct) हो जाती हैं और कई नवीन वा रूपान्तर जातियों (Species) का प्रादुर्भाव हो जाता है।

वाग्भट ने केवल ३-४ पशुपक्षियों का नाम देकर क्रियात्मक भाव दर्शाया है, परञ्च सुश्रुत ने इस स्थल पर और आगे अ० ४६ में मांस वर्ग के अन्तर्गत, एवं चरक ने भी सूत्रस्थान अ० २७ में मांस वर्ग का उल्लेख करते हुए नानाविध प्राणियों के नाम, तथा 'भूमिशयाः, वारिचराः' आदि स्वभाव देकर प्राचीन जन्तुविज्ञान (Zoology) की रक्षा की है।

प्रयोग (Use)—जैसा कि सुश्रुत और वाग्भट ने आदेश किया है, स्वस्तिक यन्त्र बाणादि शल्यों को, जो अस्थियों में फंस जाते थे, निकालने के लिये प्रयोग में आते थे। शल्य छोटे बड़े नानारूप होने से और शरीर के भिन्न २ भागों में फंस जाने से नानाविध यन्त्रसंभार की आवश्यकता पड़ती है। एक यन्त्र शरीर में सर्वत्र कार्य नहीं कर सकता। अब हम कुछ स्वस्तिक यन्त्रों का पृथक् २ वर्णन करते हैं।

(१) सिंहमुख—जिसकी आकृति चित्र १ में दर्शाई गई है और

*आजकल लखनऊ की ओर यह पशु (लकड़ बगड़) बहुत आतंक फैला रहा है। भेड़, बकरी, छोटे बच्चों और जवानों तक को उठा ले जाता है।

उसकी रचना पर भी संक्षिप्त लेख ऊपर दे दिया है, उसको अंग्रेज़ी में "Lion" Forceps (शेर के मुख वाला जम्बूर) कहते हैं, अथवा Fergusson's Lion Jaw–अर्थात् फर्गुसन का सिंहमुखी जबड़ा। डा० फर्गुसन महोदय ने इसे पहले पहल अन्वेषण करके निर्माण कराया था, अतः उसके नाम पर यह प्रसिद्ध हो गया। यह यन्त्र आजकल मिल जाता है और शस्त्रकर्मों (Operations) में बहुधा व्यवहृत होता है। इसका वारङ्ग (दस्ता-handle) चौड़ा होता है और मुख में शेर जैसे दंष्ट्र। यह यन्त्र निकलावृत (Nickel-plated) होने से चिरकाल तक ठीक रहता है। इसके दो आकार—एक छोटा और दूसरा बड़ा—मिलते हैं। एक पुस्तक में उसका यह वर्णन मिलता है:—.

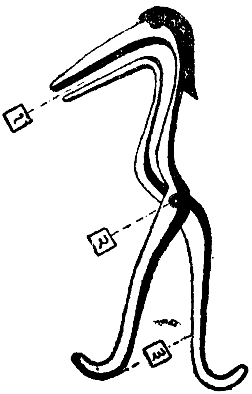
Bone-holding Forceps:—
Fergusson's—Also known as 'Lion Forceps', because of its resemblance to the jaws of a lion, when opened. Blades have stout and blunt teeth. Used to catch the bone-ends, for manipulating them during the amputation, etc.—*A Guide to Surgical Instruments.*

इसका भाव हम ऊपर दे चुके हैं। प्रयोग के सम्बन्ध में कुछ मतभेद है—अर्थात् आजकल अस्थि को काटते समय उसके प्रान्तों (सिरों) को पकड़ने के लिये यह यन्त्र काम आता है, परन्तु सुश्रुत ने उससे अस्थिगत शल्य को पकड़ कर बाहर निकालने के लिये लिखा है। एक ही यन्त्र से कई कार्य सिद्ध हो सकते हैं, अतः यह कोई विवाद की बात नहीं है।

व्याघ्र, तरक्षु, वृकादि के मुख के सदृश यन्त्र बनवाकर भी इसी प्रकार प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

(२) कंकमुख—कङ्क कौन सा पक्षी है? डल्हण का मत हम पीछे पृष्ठ ८-९ पर दे चुके हैं। वह इसे दीर्घ चोंचवाला बड़े आकार का 'कङ्क मल्ल' नामका पक्षी कहता है। 'सुरमासुत इत्यन्ये' दूसरों के विचार में यह सुरमासुत है—ऐसा भी उस ने लिखा है। इस के

विदित होता है कि डल्हण के समय में भी 'कङ्क' के सम्बन्ध में मतभेद था। अब कतिपय विद्वानों ने इस का अर्थ बगला (Heron) किया है। यदि यह बगला (वक) होता, तो डल्हण वा अरुणदत्त ने कङ्क का पर्याय 'वक' लिखा होता। मेरे विचार में यह कोई लंबी चोंच वाला बृहदाकार पक्षी सुश्रुत के समय में प्रसिद्ध था, तत्पश्चात् इस का लोप हो गया। यदि वह इस समय है भी, तो इसका नाम कुछ और होगा। डल्हण ने यह भी तो नहीं लिखा कि कङ्क जलपक्षी है, तो भी हम उसे वक, सारसादि समझ लेते। यह ठीक है कि वक की चोंच लंबी होती है, जिस से वह जलगत मछलियां पकड़ लेता है और है भी महाप्रमाण (of big size), तथापि हमें कङ्क का अर्थ 'वक' न करके इस प्रश्न को अभी खुला रहने देना चाहिये। विद्वानों को इस पर विचार करके निश्चय करना चाहिये।



चित्र २

कङ्कमुख यन्त्र

(१) चोंच

(२) कील

(३) हस्तग्रह

हम ने इस की आकृति चित्र २ में दी है, जो Surgical Instruments of the Hindus से ली है। यह कल्पनामात्र (Imaginary) समझनी चाहिये। चोंच (१) पक्षितुल्य है। बन्द होने पर वह गोल हो जाती है, छिद्र में भली प्रकार घुस सकती है और जब यह गंभीर शल्य तक पहुंचे, तो इसे (दस्ते को दबाने से) खोल कर शल्य को मत्स्यवत् पकड़ा जा सकता है। गंभीर अदृश्य शल्यों के लिए यह यन्त्र उपयोगी है। इसी कारण सुश्रुत ने कङ्कमुख यन्त्र की भूरि २ प्रशंसा की है, यथाः—

निवर्तते साध्ववगाहते च शल्यं निगृह्योद्धरते च यस्मात्।
यन्त्रेष्वतः कङ्कमुखं प्रधानं स्थानेषु सर्वेष्वधिकारि चैव ॥२१॥

(सु० सू० अ० ७)

कङ्कमुख यन्त्र भली प्रकार घूम सकता है और गंभीर से गंभीर शल्य तक पहुंच कर और उसे पकड़ कर बाहर निकाल लाता है। इसी कारण कङ्कमुख सब यन्त्रों में प्रधान है और (शरीरगत) सब स्थानों (अंग, प्रत्यंग, वक्ष, उदरादि) के लिये उपयोगी है।

इस से प्रतीत होता है कि आचार्य सुश्रुत के समय में यह यन्त्र शस्त्रकर्मों में बहुत उपयोगी और प्रसिद्ध था। शोक। यह हम तक नहीं पहुंच सका[१]।

अब भी लंबी चोंच वाले यन्त्र मिलते हैं, जैसे Ligature forceps (or carrier) etc., परन्तु इनका प्रयोजन भिन्न है। कङ्कमुखवत् कोई सर्वत्रगामी यन्त्र अब नहीं मिलता।

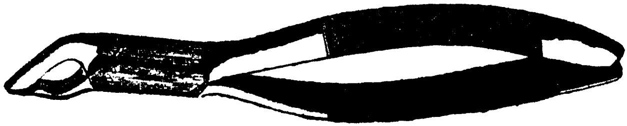
प्रसंगवश दो और यन्त्र नीचे दिये जाते हैं, जो वैद्यों के लिये उपयोगी हैं:—

१. श्री वाग्भट ने भी थोड़े से परिवर्तन के साथ यही श्लोक अपने ग्रन्थ में दे दिया है 'निवर्तते साध्ववगाहते च ग्राह्यं गृहीत्वोद्धरते च यस्मात् यन्त्रेष्वतः कङ्कमुखं प्रधानं स्थानेषु सर्वेष्वधिकारि यच्च'' ॥ ४२॥

[अ० ह० सू० अ०२५]

यहां 'शल्यं' के स्थान पर 'ग्राह्यं' और 'चैव' के स्थान पर 'यच्च' प्रयोग किया गया है। अर्थ पूर्ववत्।

१. श्येनमुख स्वस्तिक यन्त्र (Universal Tooth Forceps)--



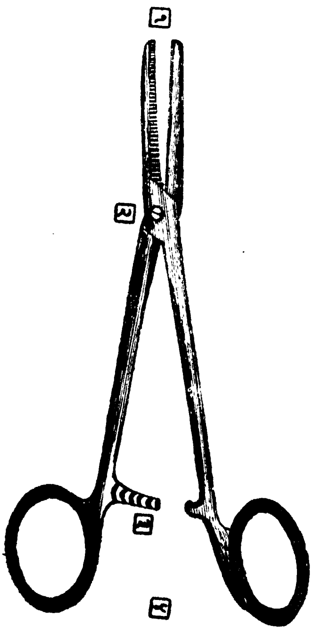
चित्र ३

(श्येनमुख) विश्वव्यापी दन्तनिष्कासक यन्त्र

यह सब प्रकार के दांत निकालने का यन्त्र है, अतः इसे कङ्कमुख की तरह Universal (विश्वव्यापी) नाम दिया गया है। वैसे तो ऊपर वा नींचे के भिन्न २ प्रकार के दांत निकालने के लिए पृथक् २ स्वस्तिक यन्त्र (Forceps) मिलते हैं, परन्तु यह अकेला सब दांत निकाल सकता है। यह उत्तम शस्त्रलोह (Fine steel) से बनता है और लघु तथा दृढ़ होता है। इस के मुख के अगले भाग (Tip) पर भीतर की ओर ऐसी गहराई वा कटाव (Notch) होता है, जिस में दस्ते को विधिपूर्वक दबाने से प्रत्येक दांत फंस जाता है। ग्रहस्थान कुछ वक्र और भीतर से खुला हुआ और लंबा होता है। यह अन्तिम हनु (Molar teeth) तक पहुंच जाता है। इस का प्रयोग किसी दक्ष दन्तचिकित्सक (Dentist) से सीख लेना चाहिये। अन्यथा अज्ञानवश दांत निकलने की बजाय टूट जाते हैं वा इतना रक्तस्राव होता है, कि बन्द करना कठिन हो जाता है वा असह्य वेदना होती है।

इस के अतिरिक्त एक Root Forceps (दन्तमूलस्वस्तिका) होती है, जो टूटे हुए दांतों की जड़ों (stumps) को निकालने के लिए उपयोगी है।

२. धमनीग्राही स्वस्तिकयन्त्र (Artery Forceps)—चित्र ४—



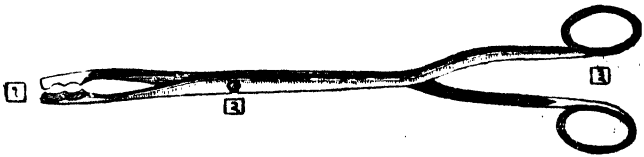
चित्र ४
धमनीग्राही यन्त्र
Artery Forceps

यह आर्टरी फार्सैप्स छोटी बड़ी दो प्रकार की होती हैं। इस के फलक (Blades) सुदृढ़ होते हैं। मुख वा अग्रभाग (१) छोटा होता है और भीतर की ओर रेखाएं (Serrations) होती हैं। इस यन्त्र का प्रयोग शस्त्रकर्म (Operation) करते समय कटी हुई धमनियों और शिराओं के सिरों को पकड़ कर रक्तस्राव बन्द करने के लिये किया जाता है। तदनन्तर उन्हें सूत्र से बांधना सुगम हो जाता है। इसके वारंग(४)में ऐसा ग्रह (catch) होता है (३),जिससे दोनों फलक परस्पर जकड़े जा सकते हैं। पुनः उन्हें हाथ से पकड़े रहने की आवश्यकता नहीं रहती। शल्यविज्ञान की दृष्टि से यह यन्त्र बहुत उपयोगी है। इस के नानाविध उपयोग कर्माभ्यास से विदित हो जाते हैं।

दो अन्य उपयोगी स्वस्तिक यन्त्रों के चित्र नीचे दिये जाते हैं :—

(क) Bullet Forceps (क्रौंचमुख)—बन्दूक की गोली (Bullet)

निकालने के लिये यह चित्र ५ में प्रदर्शित किया जाता है। इसका मुख (१) वा जबड़ा (Jaw) कुछ कटा हुआ है। इस से गोली सुगृहीत हो सकती है। इसका दूसरा नाम Stevenson's Forceps (Extractor)

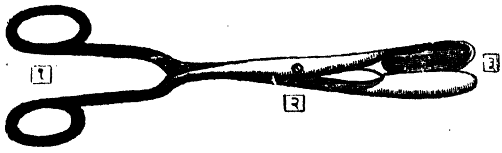


चित्र ५

क्रौंचमुख यन्त्र (Bullet Forceps)—१० जबड़े

है। यह चित्र लंडन के War Office (युद्ध कार्यालय) के नमूने के अनुसार है। इस का एक रूपान्तर अम्रीकन बुलैट फार्सैप्स (American Bullet Forceps) है, जिस के जबड़े चमचे (Spoon or scoop–दर्व्याकार) होते हैं। उन में भी गोली सुगमता से फंस जाती है।

(ख) Lithotomy Forceps, Little's (लिटल महाशय का कुररमुख वा अश्मरीनिष्कासक यन्त्र)–चित्र ६–इस के जबड़े (३) चमचे (Spoon) की तरह हैं, परन्तु भीतर से खर हैं। यह मूत्राशय से पत्थरी



चित्र ६

अश्मरी निष्कासक यन्त्र [कुररमुख]

(Stone) निकालने के काम आता है। यह यन्त्र ७ और ६ इंच लंबा दो प्रकार का होता है।

आजकल अनेक प्रकार के स्वस्तिकयन्त्र (Forceps) भिन्न २ प्रयोजनों के लिये बने हुए मिलते हैं, जो किसी बड़े आतुरालय में देखे जा सकते हैं। उदाहरणार्थ Skull forceps (कपालार्थ), Uterine forceps (गर्भाशय के लिये), Goitre forceps (गलगण्डार्थ), इत्यादि।

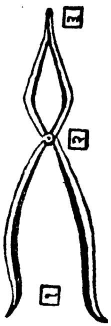
"यन्त्रों की लंबाई (Lengh of Instruments)—हमारे शास्त्रकारों ने लंबाई प्रायः अंगुलियों (digits) में लिखी है, यथा--"स्वस्तिकयन्त्राणि अष्टाददांगुलप्रमाणानि, संदंशौ षोडशांगुलौ" इत्यादि। तीन अंगुलियां प्रायः दो इंचों के समान समझें वा एक अंगुल ⅔ इंच के तुल्य। स्वास्तक यन्त्र, जो १८ अंगुल लंबे होते हैं, वह १८×⅔=१२" वा फुट भर लंबे जानें। किसी का यह भी वचन है कि 'Big instruments hold well' अर्थात् बड़े औज़ार पकड़ते अच्छी तरह जाते हैं। प्राचीन काल में बाणों को निकालने के लिए लंबे स्वस्तिक यन्त्रों की आवश्यकता पड़ती थी।

१. संदंशयन्त्राणि (Tongs or Pincers)

सनिग्रोऽनिग्रहश्च संदंशौ शोडशांगुलौ भवतः; त्वङ्मांससिरास्नायुगतशल्योद्धरणार्थमुपदिश्येते ॥ ११॥

[सु० सू० अ० ७]

संदंश यन्त्र सनिग्रह (निग्रहयुक्त) और अनिग्रह (निग्रहरहित वा निग्रहहीन) दो प्रकार के और १६ अंगुल लम्बे होते हैं। त्वचा, मांस, सिरा और स्नायु में आसक्त शल्य के निष्कासनार्थ उपयोगी हैं।



चित्र ७
सनिग्रहसंदंश-यन्त्र
१. हस्तग्रह
२. कील
३. मुख

वक्तव्य—"सम्यग्दश्यतेऽनेनेति संदशः"—अर्थात् जो अच्छी प्रकार दंश करले (सर्पपिपीलिकावत् डस ले) वा पकड़ ले, उसे 'संदंश' कहते हैं। 'सन्नो' वा 'संड़ासो' जो लोहकारों के पास होती है (देखो चित्र ७), वह 'संदंश' वा 'संदंशनी' का अपभ्रंश है। इस के दो फलक (Blades) होते हैं, जिन में स्वस्तिकयन्त्रवत् कील (२) होता है। मुख (३) सूक्ष्म और हस्तग्रह (१) दृढ़ तथा वक्र होता है। इस के संबन्ध में डल्हण ने अन्य टीकाकारों का मत यों दिया है—"अन्ये तु सनिग्रहः लोहकारसदंश इव कीलबद्ध इति मन्यन्ते"—हमें तो सनिग्रह संदंशका यह भाव ठीक प्रतीत होता है।

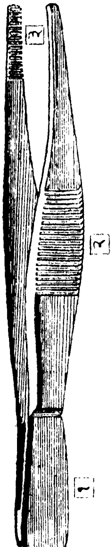
संदंश का दूसरा भेद 'अनिग्रह' बिना कील के (without a catch) है[१]। उसे आज कल Dressing Forceps (व्रणोपयोगी चिमटी) or Dissecting Forceps (शवच्छेदन--सहायक चिमटी) कहा जाता है। इसमें कील (निग्रह) नहीं होता। इस के फलक एक सिरे पर जुड़े रहते हैं। भीतर एक बन्धन (Spring) होता है, जिसे

---

१. श्री वाग्भट के संदंश—सम्बन्धी वचन देखिये :—
कीलबद्धविमुक्ताग्रौ सन्दंशौ षोडशांगुलौ। त्वक्शिरास्नायुपिशित-लग्नशल्यापकर्षणौ ॥ ८ ॥ (अ० हृ० सू० अ० २५)

संदंश दो प्रकार के हैं—(१) कीलबद्ध—कील से जुड़े हुए, (२) मुक्ताग्र—जिन का अगला सिरा खुला हो। इन की लंबाई १६ अङ्गुल और कार्य त्वक्, सिरा, स्नायु और मांस गत शल्य को उद्धरण करना है। यहां कीलबद्ध संदंश से अभिप्राय संदंशनी (सन्नी) है [देखो चित्र ७], मुक्ताग्र संदंश से चिमटी (Dressing forceps) (चित्र ८ और ९) अभिप्रेत है। सुश्रुत की अपेक्षा वाग्भट के वचन अधिक स्पष्ट हैं।

दबाने से चिमटी का दूसरा सूक्ष्माग्र सिरा बन्द होकर वस्तु (शल्यादि) को पकड़ लेता है। इस 'सनिबन्धन संदंश' को आजकल Spring Dressing Forceps[1] कहते हैं और यह अब छोटे बड़े कई प्रकार के मिलते हैं। कुछ चिमटियां Springless (अनिबन्धन) होती हैं। इन में कईयों का मुख खर और चपटा होता है और कईयों का सूक्ष्म नोकदार (Pointed) वा सदन्तुर (toothed)। साधारण संदंशनी (Dressing Forceps) का आकार V की तरह होता है (देखो चित्र ८)। यह बहुत उपयोगी यन्त्र है। प्राचीन रूप चित्र ९ में देखें। डल्हण ने इसके विषयमें लिखा है "अन्यश्चानिग्रहः अनिबन्धनः स्वर्णकारस्येव।"—दूसरा बन्धन (कील) रहित स्वर्णकारों जैसा। अनिग्रहसदंशं के सम्बन्ध में कुछ मतभेद है। डल्हण उसे "एकः सनिग्रहः सवारंगो नापितस्येव" ऐसा लिखता है—अर्थात् सनिग्रह संदंश वह है, जिस पर वारंग (चक्र, छल्ला, वलय-ring) चढ़ा हो, जैसे नापित (Barber) का। इसे वाग्भट ने मुचुण्डी (मोचना) कहा है।



चित्र ८
अनिग्रह संदंश
[नवीन]

यहां निग्रह का भाव छल्ले से है, न कि कील से, फिर अनिग्रह संदंश साधारण चिमटी वा चिमटा (Fire tongs) होगा। कभी २ चिमटे पर भी छल्ला चढ़ा रहता है, जिस को ऊपर नीचे करने से चिमटा वा मुचुण्डी खुल वा बन्द हो सकती है।



चित्र ९
अनिग्रह संदंश
(प्राचीन)

वस्तुतः संदंश यन्त्र ३ प्रकार के हुए—(१) सन्नी

१. चिमटियाँ (Pincers) बिना स्परिंग के (Springless) भी होती हैं, तब उन्हें केवल Dressing Forceps कहते हैं।

(२) चिमटी, (३) मुचुण्डी[१]। सुश्रुत को कौनसे दो यन्त्र अभिप्रेत थे, कहना कठिन है। यदि निग्रह का अर्थ कील हो, तो नं० १ और २। यदि निग्रह का अर्थ छल्ला हो, तो नं० २ और ३। डल्हण ने भी यह तीनों ‡ और वाग्भट‡ ने भी ३ वा ४।

१ "मुचुण्डी सूक्ष्मदन्तर्जुर्मूले रुचकभूषणा। गंभीरव्रणमांसानामर्म्मणः शेषितस्य च" ॥८॥ (अ० हृ० सू० अ० २५)—मुचुण्डी (मोचना) छोटे दांतों (३) से युक्त और ऋजु (सरल, अवक्र); मूल (ग्रहस्थान) १ में एक रुचक (चक्र, वलय वा छल्ला-ring) २ से सुभूषित होती है (चित्र १०)। गंभीर व्रण (Deepa bscess or sinus) गत मांसादि तथा छिन्न अर्म (Pterygium) का अवशिष्ट भाग आहरण करने के लिये काम आती है। एवं मुचुण्डी वाग्भट के अनुसार तीसरा संदश यन्त्र है। दो ऊपर बता चुके हैं।



चित्र १०
मुचुण्डी
रुचक
भूषणा

‡ वाग्भट ने ६ अंगुल एक और छोटा सा संदश वर्णन किया है—"षडङ्गुलोऽन्यो हरणे सूक्ष्मशल्योपपक्ष्मणाम्"—६ अंगुल एक और संदश है, जो सूक्ष्म शल्य अथवा पक्ष्मकोप [Trichiasis] में उपपक्ष्म (पलकों-eye-lashes] निकालने के लिए है (चित्र ११) यह आजकल Epilation or Cilia Forceps कहलाती है। इसका चपटा मुख (१) देखो। यह संदंश का चौथा प्रकार है, जिसका सुश्रुत में वर्णन नहीं मिलती। यह चिमटी के अन्तर्गत ही समझें।



चित्र ११
उपपक्ष्म संदंशनी
Cilia For-
eps

कार्य--चिमटी (Dressing Forceps) व्रण-क्रियार्थ बहुत उपयोगी यन्त्र है। यह Tissues अर्थात् त्वचा, मांस, शिरा, धमनी*, स्नायु आदि गत सूक्ष्म तथा बाह्य शल्यों (Superficial foreign bodies) कील, कण्टकादि तथा व्रणों के मांस, त्वक्, पूयादि के शोधन तथा आहरणादि में प्रयुक्त होती है। यह आजकल छोटी बड़ी कई प्रकार की मिलती हैं। प्राय: ४-५ इंच लंबी। कईयों का मुख स्थूल चपटा होता है और कईयों का नोकदार। संक्षिप्त कार्य अंग्रेज़ी शब्दों में यह है, "Ordinary dissecting forceps;–sometimes toothed at the tip to have an efficient holding on the tissues."

मुचुण्डी प्राय: नासागत रोमाहरणार्थ और वाग्भटोक्त चतुर्थ संदंश उपपक्ष्म (eye-lashes, cilia, पलकों) के उखाड़ने के लिये व्यवहार की जाती है।

लंबाई—षोड़षांगुल [लगभग ११ इंच] लम्बाई अधिक प्रतीत होती है। ८-१० अंगुल पर्याप्त है अथवा ६ अंगुल (वाग्भटानुसार ४र्थ संदंशवत्)। लोहकारों की सन्नी १६ अंगुल होती है वा इससे भी अधिक। यह स्थूल शल्यों को पकड़ने के काम आसकती है।

१०. तालयन्त्राणि (Scoops)

तालयन्त्रे द्वादशांगुले मत्स्यताल* वदेकतालद्वितालके; कर्णनासानाडीशल्यानामाहरणार्थम् ॥१२॥‡ (सु० सू० अ० ७)

तालयन्त्र १२ अंगुल लम्बे, मत्स्यताल वा तालु के सदृश (भीतर से गहरे) –एकताल (Single scoops) और द्विताल (Double scoops)–दो प्रकार के होते हैं। इनका कार्य कर्ण, नासा, नाड़ी–व्रणादि गत शल्यों का आहरण करना है।

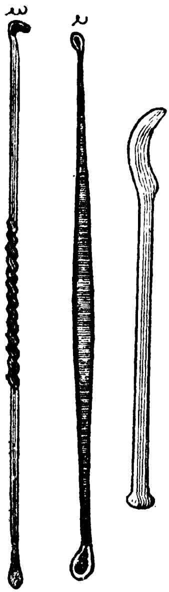
---

*मत्स्यतालुवदिति पाठान्तरम्।

‡"द्वे द्वादशांगुले मत्स्यतालवद् द्वयेकतालके। तालयन्त्रे स्मृते कर्णनाडीशल्यापहारिणी ॥१०॥ [अ० हृ० सू० अ० २५]—वाग्भट के यह वचन सुश्रुत के तुल्य ही हैं। अर्थ भी तद्वत् जानें।

वक्तव्य—मत्स्यताल का अर्थ श्री डल्हण ने यों किया है, "तालमत्र शकलमाहुः, मत्स्यस्य मीनस्य तालतुल्ये प्रतनुमुखे इत्यर्थः।"

मत्स्यताल मछली के पतले श्वेत छिलके होते हैं, जो मत्स्याहारी छुरी दरान्ती आदि से सर्वप्रथम पृथक् कर लेते हैं। इन्हीं को डल्हण ने मत्स्यशकल (मीनखंड) कहा है। यदि मत्स्यतालु (पाठान्तर) पढ़ा जावे, तो अरुणदत्तानुसार 'मत्स्यगलतालम्' (Palate bone of the fish-मछली का तालु) अर्थ होगा। यह भीतर से कुछ गहरा (hollowed in the middle) होता है। अतः तालयन्त्र का ताल भी कुछ गहरा होना चाहिये। चपटे ताल से शल्याहरण संभव नहीं। ऐसे गहरे ताल को अंग्रेजी में Scoop (स्कूप) कहते हैं। तालयन्त्र पुनः दो प्रकार के हैं–(१) एकताल (Single Scoop) और (२) द्विताल (Double Scoop)। वर्तमान शल्यसंभार में यह दोनों मिलते हैं (देखो चित्र १२) और प्रयोजन भी सुश्रुतानुसार कर्णनासादि-गत शल्य (गूथ, पूयादि) का अपकर्षण है। कर्णशल्यापकर्षणार्थ Aural or Ear Scoop (कर्णतालयन्त्र)३। एवं नासा के लिये Nasal[1] Scoop (नासातालयन्त्र), नाडीव्रण वा किसी नाली के भीतर शुद्धि के प्रयोजनार्थ Sinus Scoop (नाडीतालयन्त्र) आदि का व्यवहार होता है।

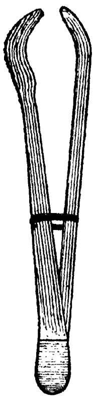


चित्र १२
१. एकताल
२. द्विताल

"परिणाहस्तु कर्णादिप्रवेशी ज्ञेयः" (डल्हण) ताल की चौड़ाई कर्णनासादि की चौड़ाई के अनुसार होनी चाहिये।

---

१. Nasal शब्द नासा से ही बना है।



चित्र १३
द्वितान

एकताल-द्वितान के विषय में डल्हण ने टीका में लिखा है, "अन्ये तु मत्स्यतालवदेकतालकद्वितालके इति पठन्ति, व्याख्यानयन्ति च-मत्स्योऽत्र भेटुलिमत्स्यः, तस्य लौहमयतालकाकारं मुखं भवति, अतस्तन्मुखार्धाकारं यन्त्रमेकतालकं, सर्वमुखाकारं द्वितालकं, तालकोऽत्र अपवारकादिकपाटसन्धिबन्धनं लौहमयमुच्यते"। भेटुल एक प्रकार की मछली है । उसका अर्धमुख एकताल और सर्वमुख द्वितालक है। द्विताल में एक अपवारक बन्धन (खोलने वाला छल्ला) लगा होता है। जब शल्य मुख में फँस जावे, तो बन्धन दबाकर मुख बन्द कर दिया जाता है और द्वितालक बाहर खींच लिया जाता है (चित्र १३)। यदि दण्ड (rod) के दोनों सिरों पर ताल (scoops) हों, तो उसे भी द्वितालक (Double scoop) कहेंगे (चित्र १२ में २)।

आधुनिक शल्यविज्ञान में एक पित्ताश्मरी तालयन्त्र (Gall-stone Scoop) भी व्यवहार किया जाता है। इसका वर्णन देखिये :-

"The spoon is oblong and shallow with a long flexible shaft, mounted on a broad handle. Edges of the spoon are necessarily blunt, as these are not meant for scraping. These are available in two sizes; the bigger ones for the gall-bladder and smaller for the bile-duct. The breadth of the smaller scoop is not more than ¼th of an inch so as to enable it to be passed in the lumen of the bile-duct.

Uses—(1) To remove the debris or the bile-sand from the gall-bladder or the bile-duct. (2) To manipulate an elusive stone, which cannot be caught by the forceps. (3) To dislodge a stone that is fixed in the wall of the gall-bladder or the bile-duct."–*A Guide to Surgical Instruments*.



चित्र १४ पित्ताश्मरी ताल यन्त्र

संक्षिप्त भाव—पित्ताश्मरी निष्कासक ताल का चमचा कुछ लंबा गोल और गहरा होता है। इसके किनारे तीक्ष्ण नहीं होते, क्योंकि यह खुरचने के काम नहीं आता[1]। यह दो आकार के होते हैं–एक बड़ा पित्ताशय के लिए और दूसरा छोटा पित्तप्रणाली के लिये। छोटे स्कूप की चौड़ाई $\frac{1}{4}''$ से अधिक नहीं होती, क्योंकि इसे नाली वा नाड़ी में से गुजारना होता है।

प्रयोग—[१] पित्ताशय वा पित्तप्रणाली से सिकता-रूप पित्त वा पित्तोद्भव मल [कूड़ा] बाहर निकालना। [२] पित्ताश्मरी वा पत्थरी [पाषाण-खंड] जो किसी स्वस्तिक यन्त्र से नहीं पकड़ा जा सकता, उसे तालयन्त्र से काबू करना। [३] पित्ताशय वा पित्तप्रणाली की दीवार में फँसे हुए पाषाण [पित्ताश्मरी] को स्थानच्युत करना॥ आकृति चित्र १४ में देखिये।

सुश्रुत के समय में भी तालयन्त्रों का प्रयोग इस प्रकार किया जाता था। नाडी[2] (नाली) शब्द से यही भाव निकलता है। ध्यान रहे, कि प्राचीन वा अर्वाचीन यन्त्रों वा शस्त्रों के प्रकार, आकार, आशय, प्रयोगादि प्रायः समान ही हैं।

---

१. खुरचने के लिए मण्डलाग्र काम आता है। उसका वर्णन शस्त्रों में किया जायेगा। २ देखो सुश्रुतोक्त पाठ में 'नाडी' शब्द।

तालयन्त्रों की लम्बाई स्थानानुसार होनी चाहिये।

११. नाडीयन्त्राणि (Tubular Instruments)

नाडीयन्त्राण्यनेकप्रकाराणि, अनेकप्रयोजनानि, एकतोमुखानि, उभयतोमुखानि* च; तानि स्रोतोगतशल्योद्धरणार्थं, रोगदर्शनार्थं, आचूषणार्थं, क्रियासौकर्यार्थं चेति, तानि स्रोतोद्वारपरिणाहानि यथायोगदीर्घाणि च। तत्र भगन्दरार्शोव्रणवस्त्युत्तरवस्तिमूत्रवृद्धिदकोदरधूमनिरुद्धप्रकशसन्निरुद्धगुदयन्त्राणि, अलाबुशृंगयन्त्राणि चोपरिष्टाद्वक्ष्यामः ॥१३॥ [सु० सू० अ० ७]

नाडीयन्त्र (जो भीतर से नाली-tube or pipe-की तरह सुषिर वा पोले होते हैं—tubular, 'नाडीवन्मध्यच्छिद्राणि'—इति डल्हणः) नानाप्रकार और नानाप्रयोजन वाले हुआ करते हैं; कुछ एकमुखी, कतिपय उभयमुखी (दो मुखों वाले) होते हैं। इनका कार्य स्रोतों (नालियों वा सच्छिद्र मार्गों) में अवरुद्ध शल्यों (Foreign bodies) को निकालना है। इनकी चौड़ाई (व्यास-diameter) स्रोतोद्वार (स्रोतों के मुख) के अनुसार होनी चाहिये और लम्बाई (Length) स्थानानुसार न्यूनाधिक। भगन्दर (Fistula-in-ano), अर्श (Piles), व्रण (Abscess, Ulcer, etc.), वस्ति (Enema), उत्तरवस्ति Urethral Douche etc, मूत्रवृद्धि (Hydrocele), दकोदर (जलोदर-Ascites), [धूम्र Fumigation], निरुद्धप्रकश (Phymosis), सन्निरुद्धगुद (Stricture of the anus or rectum)—सम्बन्धी यन्त्र, अलाबू यन्त्र और शृंग यन्त्र का वर्णन आगे करेंगे।

वक्तव्य—नाडीयन्त्र भीतर से सुषिर (रिक्तगर्भ, सच्छिद्र वा पोले) होते हैं। इन्हें अंग्रेज़ी में Tubular Instruments कहते हैं। कुछ एक ओर बन्द होते हैं और दूसरी ओर खुले, जैसे अर्शोयन्त्र,

*यदि इसके आगे 'बहुमुखानि च' ऐसा पाठ होता, तो भी उचित था।

अलाबुयन्त्रादि और कुछ दोनों ओर खुले [द्विमुखी], यथा वस्तिनेत्र, धूमनेत्र, शृंगादि। इनका मुख स्रोतों के व्यास के अनुसार कहीं छोटा होता है, यथा पिचकारी आदि में, कहीं मध्यम, यथा दकोदरयन्त्र में और कहीं बड़ा, यथा अर्शोयन्त्र, भगन्दरयन्त्र, अलाबू, शृंगादि में। लम्बाई भी स्थान तथा कार्यानुसार होती है। इनके प्रयोजन भी अनेक होते हैं, कुछ तो शल्योद्धरणार्थ, यथा दुष्टस्तन्यचूषक (Breast Pump), कण्ठनाड़ी कण्ठगतशल्योद्धरणार्थ, शृंग दुष्टरक्ताचूषणार्थ आदि २। कुछ यन्त्र रोगदर्शनार्थ प्रयुक्त होते हैं, जैसे अर्शोयन्त्र, कण्ठशल्यावलोकिनी नाडी (Throat Speculum) आदि २। आजकल भिन्न २ अंगों के रोगनिदानार्थ विविध यन्त्रों का निर्माण किया गया है, जैसे नासादर्शनार्थ नेज़ल स्पैक्युलम (Nasal Speculum), गुददर्शनार्थ रैक्टल स्पैक्युलम (Rectal Speculum), कर्णदर्शनार्थ ईयर स्पैक्युलम (Ear or Aural Speculum), फुफ्फुस वा हृदय परीक्षार्थ स्टैथस्कोप (Stethoscope), रक्तादिगतकृमिदर्शनार्थ सूक्ष्मवीक्षणयन्त्र (Microscope, micro-minute, scope-to see), ज्वरे तापमापक (Thermometer)आदि२। रोगपरीक्षणार्थ यन्त्रों को आंगल भाषा में स्पैक्युलम (Speculum-दर्शने) अथवा स्कोप (Scope-to see) शब्द अंग के नाम के साथ लगाकर पुकारा जाता है, जैसा कि उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है। भगन्दर, अर्श, व्रणादि यन्त्रों की व्याख्या चित्रसहित हम मिश्रित (तृतीय) प्रकरण में करेंगे। वहां अन्य भी अनेक प्रकार के नवीन यन्त्रों की व्याख्या की जावेगी*

*अब तुलनार्थ वाग्भट के नाडीयन्त्र—सम्बन्धी वचन देखिये—"नाडीयन्त्राणि शुषिराण्येकानेकमुखानि च। स्रोतोगतानां शल्यानामामयानाञ्च दर्शने ॥११॥ क्रियाणां सुकरत्वाय कुर्यादाचूषणाय च। तद्विस्तारपरीणाहदैर्घ्यं स्रोतोऽनुरोधतः ॥१२॥" (अ० हृ०स०अ० २५॥ नाडीयन्त्र (नलिकाकार वा नालीदार यन्त्र) शुषिर (पोले, रिक्तगर्भ-tubular) और एक वा अनेक मुख वाले होते हैं। कर्ण, नासा, मुख,

नाडीयन्त्रसंख्या—'विंशतिर्नाड्यः'—सुश्रुत के इस वचनानुसार नाडीयन्त्र २० हैं, परन्तु भगन्दर से शृंग तक १२ यन्त्र बनते हैं। २० संख्या की पूर्ति किस प्रकार हो ? इस शंका का डल्हण ने इस प्रकार समाधान किया है—"भगन्दरयन्त्रे द्वे एकं एकच्छिद्रं; अपरं द्विच्छिद्रं, अर्शोयन्त्रेऽपि द्वे, एकच्छिद्रद्विच्छिद्रभेदेन; व्रणयन्त्रमेकं व्रणच्छिद्रायामपरीणाहं; वस्तिनेत्रं चतुर्विधं वयोभेदेन, अन्ये त्रिविधमाहुः; उत्तरवस्तिनेत्रं द्विविधं पुंसां स्त्रीणां च, एके त्रिविधमाहुः; मूत्रवृद्धिदकोदरयोर्द्वे, मूत्रवृद्धिस्रावणार्थमेकं, दकोदरस्रावणार्थं चेकं, धूमनेत्राणि त्रीणि एकं वैरेचनिक, अपरं स्नेहिकं, अन्यच्च प्रायोगिकं; निरुद्धप्रकशयन्त्रमेक, सन्निरुद्धगुदयन्त्रमेकं, अलाबुयन्त्र मेकं; एवं विंशतिर्नाडीयन्त्राणि ॥ १३ ॥ इति (डल्हणः)—सारांश यह कि कुछ तो एक-एक यन्त्र हैं, यथा व्रणयन्त्र, मूत्रवृद्धि, दकोदर, निरुद्धप्रकश, सन्निरुद्धगुद, अलाबू और शृंग यन्त्र, और शेष द्विविध, त्रिविध

गुद, योनि, मूत्रमार्गादि स्रोतों में आसक्त शल्यों (Foreign bodies) तथा गूथ, पूय, अश्मरी, केशादि देखने तथा उद्धरणार्थ और आमयों (रोगों) के निदान (परीक्षा) करने के लिए, क्रियासुकरत्व क्रिया अर्थात् की सुगमताके लिए (to facilitate the action) और आचूषण (दुष्ट वायु, रक्त, स्तन्य, पूयादि के चूसने-Aspiration) के लिए बनवावें। उनका विस्तार(मोटाई),परिणाह (चौड़ाई) और दैर्घ्य (लम्बाई) कर्णादि स्रोतों के अनुसार होना चाहिये। इसके आगे वाग्भट ने कुछ विशेष नाडीयन्त्रों की आकृति, विस्तारादि देकर मनोहर व्याख्या की है, जिसे हम तृतीय प्रकरण में सचित्र वर्णन करेंगे। अब यहां 'क्रियासौकर्यार्थ' की व्याख्या करते हैं। जब अर्श के मस्सों पर क्षार वा अग्निकर्म करना हो, तो अर्शोयन्त्र गुदा में देकर और मस्से को छिद्र में फंसाकर उस पर क्षार का प्रतिसारण किया जाता है, वा उसे अग्निशलाका से जलाया जाता है। अर्शोयन्त्र यहां क्षारादिक्रिया के-

वा चतुर्विध, आयु, स्त्री-पुरुष वा वैरेचनिकादि भेद से। इस प्रकार २० संख्या पूरी हो जाती है। आजकल नाडीयन्त्रों की संख्या अत्यधिक है। नानाप्रयोजनवश नये २ यन्त्र बनते रहते हैं। उनके निर्माणार्थ लोहादि धातु, काच, रबर, शृंग प्लास्टिक आदि का प्रयोग किया जाता है। एतदर्थ हम तृतीय प्रकरण में सचित्र वर्णन करेंगे।

१२. शलाकायन्त्राणि (Probes or Rod-like Instruments)

शलाकायन्त्राण्यपि नानाप्रकाराणि, नानाप्रयोजनानि, यथायोग-परिणाहदीर्घाणि[1] च; तेषां गण्डूपदसर्पफणशरपुंखबडिशमुखे



चित्र १५
Towel clip

-सौकर्यार्थ बरता जाता है, और अब एक उदाहरण नवीन शल्यविज्ञान से देकर इस आशय का स्पष्टीकरण करेंगे। शस्त्रकर्म करने के समय आजकल Towel-clip (टाविल क्लिप–चित्र १५) का प्रयोग किया जाता है, अर्थात् त्वचा को काटने के अनन्तर क्षत (wound) के इतस्ततः तौलिया लपेट कर क्लिप (वा बन्धन) द्वारा त्वचा से जोड़ दिया जाता है, जिससे रोगी की त्वचा से व्रण दूषित न हो जावे अथवा रक्त, पूयादि से त्वचा दूषित न हो। यह भी क्रियासौकर्यार्थ एवं शेषांग-परिरक्षार्थ है। क्लिप (clip) वस्तुतः स्वस्तिक यन्त्र (Forceps) वा संदंश यन्त्र की श्रेणी से सम्बन्ध रखता है। वाग्भटोक्त अंगुलित्राण भी क्रियासौकर्यार्थ है।

१. शलाकायन्त्रसम्बन्धी वाग्भट के वचन—"शलाकाख्यानि यन्त्राणि नानाकर्माकृतीनि च। यथायोगप्रमाणानि......॥२७॥" (अ० हृ० अ० २५)—शलाकाख्य (शलाका नाम वाले) यन्त्र नानाप्रकार—

द्वे द्वे, एषणव्यूहनचालनाहरणार्थमुपदिश्येते; मसूरदलमात्रमुखे द्वे किंचिदानताग्रे स्रोतोगतशल्योद्धरणार्थं; षट्कार्पासकृतोष्णीषाणि, प्रमार्जनक्रियासु; त्रीणि दर्व्याकृतीनि खल्लमुखानि, क्षारौषधप्रणिधानार्थं, त्रीणि अन्यानि जाम्बववदनानि, त्रीणि अंकुशवदनानि, षडेवाग्निकर्मसु अभिप्रेतानि; नासार्बुदाहरणार्थमेकं कोलास्थिदलमात्रमुखं खल्लतीक्ष्णोष्ठं; अञ्जनार्थमेकं कलायपरिमण्डलमुभयतो मुकुलाग्रं; मूत्रमार्गविशोधनार्थमेकं मालतीपुष्पवृन्ताग्रप्रमाणपरिमण्डलमिति ॥१४॥ (सु० सू० अ० ७)

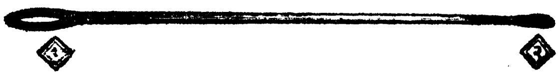
शलाकायन्त्र नाना प्रकार के और नाना प्रयोजन वाले होते हैं। इनकी चौड़ाई और लम्बाई आवश्यकतानुसार न्यूनाधिक होती है। उनमेंसे गण्डूपद मुख२, सर्पफण २, शरपुंख २ और वडिशमुख २ होते हैं। इनका कार्य यथाक्रम एषण, व्यूहन, चालन और आहरण है। मसूरदलमात्रमुख वाले २, जिनका अग्र-कुछ मुड़ा हुआ होता है, स्रोतोगत शल्यों को निकालने के लिये प्रयुक्त होते हैं। ६ शलाकायें ऐसी हैं, जिनके एक सिरे पर कार्पास (तूल-Cotton wool) लगी रहती है, यह व्रणों के प्रोञ्छन (पोंछने) में व्यवहार की जाती हैं। ३ दर्वी (कड़छी वा चमचा) के आकार वाली खल्लमुख (खरलवत् गम्भीर वा निम्न) क्षार तथा (तरल) औषध डालने के लिये। तीन और जांबवमुख (जामुन फल के सदृश गोल और लम्बी, Oval-shaped), और ३ अंकुशाकार (Hook-shaped, मछली पकड़ने वाले कांटे वा आंकड़े की तरह)—यह छः शलाकायें अग्निकर्म (Cautery) के लिये उपयोगी हैं। नासार्बुदाहरणार्थ १ शलाका, जिसका आकार कोलास्थि (बेर की गुठली के

—के कर्मों (Operations) में उपयोगी और नानाविध आकृति वाले होते हैं। इनका परिमाण (size) यथायोग्य होना चाहिये। इसके आगे वाग्भट ने सुश्रुतवत् गण्डूपदमुखादि की आकृति और कार्य का वर्णन किया है, जिसका उल्लेख हम अगले पृष्ठों में करेंगे।

अग्रभाग) के सदृश और जिसके ओष्ठ (किनारे) खरल की तरह, परन्तु कुछ तीक्ष्ण होने चाहियें। अंजनशलाका (सुरमचू-Collyrium rod) एक, कलायपरिमण्डल (मटर के दाने जितनी मोटी) और दोनों सिरों पर मुकुल (पुष्पकलिका–Bud) की तरह किंचित् स्थूल । और मूत्रमार्ग (Urethra–पेशाब की नाली) के शोधनार्थ एक शलाका, जो मालती-पुष्पवृन्त (चमेली के फूल के नाल्याकार वृन्त)वत् गोल हो।

वक्तव्य—शलाका का अर्थ सलाई (Long needle) है। उदाहरणस्वरूप आप स्वैटर बुनने वाली सलाई(Knitting needle) ले सकते हैं। थोड़े बहुत अन्तर के साथ यह २८ प्रकार की हैं। मूल-पाठ देखकर गिनती करलें। अब यथाक्रम उनका वर्णन किया जाता है।

(१) गण्डूपदमुखी शलाका—(एक छोटी, दूसरी बड़ी)—यह



चित्र १६ गण्डूपदमुखी शलाका १. सूचीपाश २. गण्डूपदमुख

शलाका गण्डूपद (गंडोए वा केंचवे, Earth-worm) की तरह होती है। अर्थात् इसका मुख गण्डूपद के मुख के सदृश किंचित् स्थूल होता है (चित्र १६)। इसे अंग्रेज़ी में Blunt probe (ब्लंट प्रोब) कहते हैं। इसका कार्य एषण, अन्वेषण वा ढूंढना (Exploration) है । भगन्दर, नाडीव्रणादि में उसे प्रवेश करके व्रण की गहराई और पूयादि का ज्ञान प्राप्त करना है। जो प्रोब (probe) आजकल मिलती है, उसका एक सिरा तो गण्डूपदमुख की तरह स्थूल (Bulbous) होता है और दूसरे सिरे पर एक सूचीपाश (Needle-eye) हुआ करता है। स्थूलाग्र होने का भाव तो स्पष्ट

है–अर्थात् शलाका व्रण के भीतर न चुभे वा पीड़ा न करे। सूचीपाश का प्रयोग भी कभी २ करना पड़ता है। यदि व्रण बहुत गम्भीर हो, तो सूचीपाश में सूत्र डाल दिया जाता है। यदि सम्पूर्ण शलाका व्रण में चली आवे, तो सूत्र द्वारा उसे खींचकर बाहर निकाल सकते हैं, अन्यथा शलाका को बाहर निकालना दुष्कर होगा। गण्डूपदमुखी के सम्बन्ध में निम्न वर्णन ध्यान देने योग्य है:—

Probe—A flexible narrow shaft, about 6" long with a bulbous point at one end and a needle-eye at the other.

Uses—(i) To explore a sinus;—(a) to know the depth of the sinus; (b) to know if a foreign body is present at the bottom of the sinus; (c) to know whether the sinus leads to the bone underneath; (d) if it leads to the bone, to know whether there is a dead piece of bone and if present, whether it has become loose or not.

(ii) To diagnose a fistula:—its variety, direction and extent. To see if a fistula-in-ano is complete or incomplete.

(iii) In circumcision operation, before cutting the prepuce, a probe is always passed inside the prepuce to see whether the glans is free underneath.

Note—There is a longer and stouter probe about 10" to 12" in length, used in operation of the cancer of the breast and other diseases.

भावार्थ—प्रोब एक नम्र पतली शलाका है, ६ इंच लम्बी, एक सिरे पर मोटी और दूसरे पर सूचीपाशयुक्त।

प्रयोग—(१) नाडीव्रण (Sinus) का अन्वेषण करना—(क) उसकी गहराई जानना, (ख) क्या उसके अन्त पर कोई शल्य तो नहीं? (ग) क्या नाडीव्रण हड्डी तक तो नहीं पहुँचता? (घ) यदि अस्थि तक पहुँचता है, तो क्या उसका कोई खण्ड मृत तो नहीं, यदि हड्डी मृत है, तो शिथिल है वा कठोर?

(२) भगन्दर का निदान करना:—उसका भेद, दिशा और प्रमाण। यह देखना कि भगन्दर सम्पूर्ण है (जो गुदा-rectum के भीतर पहुंचे) वा असम्पूर्ण? (शलाका भगन्दर के बाह्य मुख में डालो और गुदा के भीतर अंगुली देकर देखो। यदि शलाका अंगुली को स्पर्श करे, तो सम्पूर्ण है, अन्यथा असम्पूर्ण)

(३) निरुद्धप्रकश में (अर्थात् जब चमड़ा शिश्नमुण्ड पर से न उतरे) अग्रचर्म काटने से पूर्व गण्डूपदशलाका उसके भीतर गुज़ारकर देखो कि क्या चमड़ा शिश्नमुण्ड से पृथक् है वा संलग्न (Adhesive)।

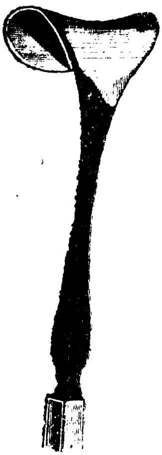
नोट—इसके अतिरिक्त एक प्रोब १० से १२ इंच तक लम्बी होत है, जो स्तनार्बुद (स्तन के कैंसर] वा अन्य रोगों में काम आती है।

देखिये, अब भी सुश्रुतवत् दो शलाकायें (Probes) हैं औ॰ कार्य भी तद्वत्*। प्रोब पर तूल लगाकर गले में दवाई लगा सकते हैं और कर्ण में सावधानी से डालकर मल, पूयादि निकाल सकते हैं।

---

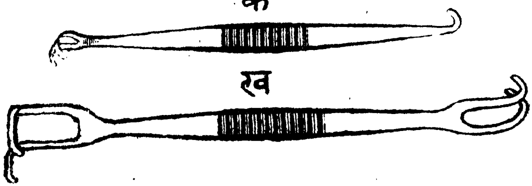
*'उभे गण्डूपदमुखे स्रोतोभ्यः शल्यहारिणी।' (अ०हृ०सू०अ०२५) अर्थात् गण्डूपदमुख शलाकायें दोनों स्रोतों से शल्याहरणार्थ प्रयुक्त होती हैं। सर्वसामान्य एषण कर्म (Probing) इससे पूर्व वाग्भट ने कह ही दिया है। शेष सुश्रुतवत् समझें।

(२) सर्पफणमुखी शलाका (Hooded Rod) सर्पफण (Snake's hood) की तरह जिस शलाका का मुख (एक सिरा) हो, उसे सर्पफणी शलाका§ कहते हैं (देखो चित्र १७)। इसका कार्य सुश्रुत ने 'व्यूहनं' लिखा है, जिसकी टिप्पणी डल्हण ने यों की है, "व्यूहनं ऊर्ध्वीकरणं छित्त्वा उत्तुण्डितस्य उद्धरणार्थं"। अर्थात् व्यूहन कटे हुए व्रण के किनारे को ऊपर उठाने को कहते हैं। ठीक इसी प्रयोजन के लिये आजकल Retractors (रिट्रैक्टर्स) का प्रयोग किया जाता है। अतः प्राचीन सर्पफणी शलाका का अंग्रेज़ी नाम Retractor ही है। यह छोटे बड़े



चित्र १७

सर्पफणी शलाका कई प्रकार के हैं, जैसा कि चित्र १८ से स्पष्ट है।



चित्र १८
Retractors
क. Single
ख. Double
(सर्पफणे द्वे)

आधुनिक शल्य-विज्ञान में सर्पफणी का वर्णन इस प्रकार मिलता है:—

"Retractors:—Are made of various patterns.

§'व्यूहनेऽहिफणावक्त्रौ द्वौ दशद्वादशांगुलौ।' (अ०हृ०सू०अ०२५)
—अर्थात् अहिफणवक्त्र (सर्पफणमुख) शलाकायें दो होती हैं, दस और बारह अंगुल लम्बी, कार्य व्यूहन (कटे हुए भाग को ऊपर उठाना) वा Retraction (पीछे को हटाना वा खींचना)। वाग्भट का यह वचन सर्वथा सुश्रुततुल्य ही है।

(i) Hooked—May be single, double or multiple. The points of the hooks are always blunt, lest they should puncture or otherwise injure the structures retracted. (ii) Flattened and curved at different angles."—*A Guide to Surgical Instruments*.

भावार्थ—रिट्रैक्टर कई आकृतियों के होते हैं—(क) अंकुशवत् मुड़े हुए (Hooked की अपेक्षा सुश्रुत का फणी Hooded शब्द प्रशस्ततर है), एक फण वाले, दो वा अधिक फणों वाले। अंकुशों (फणों) के सिरे सदैव स्थूल (Blunt) होते हैं, यतः त्वचा, मांसपेशी आदि रचनाओं को हटाते वा खींचते समय उन्हें हानि न पहुँचायें। (ख) यह हुक (वा फण) चपटे (flat) और भिन्न २ कोणों (angles) पर मुड़े हुए होते हैं (देखो चित्र १८)। (यह सब बातें सुश्रुत के फण शब्द में ही आ जाती हैं)।

Uses:—(i) To draw apart the edges of a wound during an operation, so that free access may be had to the deeper structures. (ii) To steady the tissues, while being freed by direction. (iii) To hold important structures aloof so as to protect them from injury. (iv) To check oozing from small vessels in the edges of an incision.

प्रयोग—(क) क्षत वा व्रण के किनारों को शस्त्रकर्म करते समय पृथक् करना वा खींचना, जिससे गम्भीर रचनाओं तक प्राप्ति (पहुँच) हो सके। (ख) मांसपेशी, स्नायु आदि को छेदन करते समय दृढ़ता से पकड़े रखना। (ग) आवश्यक रचनाओं (मर्मादि) को रक्षार्थ पृथक्

रखना। (घ) छिन्न भाग के किनारों से रक्तस्राव को रोकना।

Note—Retractors should be used gently.

रिट्रैक्टर को मृदु भाव से प्रयोग करना चाहिये।

प्रयोगसम्बन्धी सब भाव व्यूहन शब्द में आ जाते हैं, जैसा कि डल्हण ने "व्यूहनं ऊर्ध्वीकरणं छित्त्वा उत्तरिडतस्य उद्धरणार्थं" से स्पष्ट किया है। हमारे ऋषि थोड़े ही शब्दों में बहुत कुछ कह जाते थे।

आधुनिक शल्यविज्ञान में नानाविध सर्पमुखी शलाकायें भिन्न २ अंगों के लिए काम आती हैं, यथा Abdominal Retractor (उदर के लिए), Cheek Retractor (कपोलों को खोलने के लिए) Eye-lid Retractor (अक्षिछदों को खोलकर पृथक् २ रखने के लिए), Vaginal Retractor (योनिद्वार को खोलने के लिये), Wound Retractor (व्रणों के किनारों को पृथक् करने के लिये) आदि २ (चित्र १८)।



चित्र १६

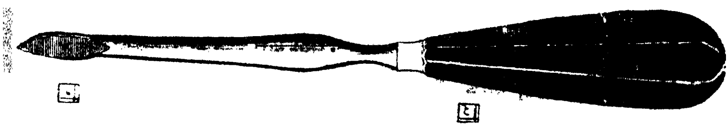
(३) शारपुंखमुखी शलाका (Arrow-root like instrument)—शरपुंख बाण के मूलभाग को कहते हैं, यथा– "शरपुंख: शरगुणसन्धानस्थानम्" (डल्हण)—अर्थात् बाण का जो सिरा (मूल) गुण (रस्सी) के साथ लगाया जाता है, वह शरपुंख (Root of the arrow) कहलाता है। तदाकार यन्त्र को शरपुंख शलाका [चित्र १६] कहा गया है। इस का कार्य सुश्रुत ने चालन(हिलाना—Moving to and fro) लिखा है। जिस से अस्थि-सक्त शल्य शिथिल (ढीला) हो जावे। ऐसे यन्त्रों को आज कल Elevators (एलिवेटर) कहते हैं, जो कई प्रकार के हैं, यथा Bone Elevators

*"चालने शरपुंखास्यौ" (अ० हृ० सू० अ० २५)—अर्थात् शरपुंखास्य (शरपुंखमुख) दो हैं और चालन के लिए प्रयुक्त होते हैं। वाग्भट का यह वचन तो सुश्रुतोक्त शरपुंखी शलाका के लिए है, परन्तु उसने इस प्रकार का एक और यन्त्र दन्तपातक भी लिखा है (देखो आगे)।

(अस्थि के चालनार्थ), Skull Elevator (कपालचालक), Tonsil Elevator (गलग्रन्थि-टांसिल के लिये), Dental Elevator (दांतों को हिलाने के लिए‡) इत्यादि।

(४) बडिशमुखी शलाकायें (Hooks)—'वडिशं मत्स्यबन्धनमिति डल्हणः' वडिश मत्स्यबन्धन (मछली पकड़ने वाले कांटे—Fishing hook) को कहते हैं। इसका कार्य आहरण (निकालना वा किसी फंसी हुई वस्तु को ऊपर उठाना—to uplift a foreign body) है। यह दो प्रकार के हैं, जैसा कि चित्र २१ से स्पष्ट है। (१) किंचिदानत—थोड़ा मुड़ा हुआ (Slighly bent-अल्पवक्र), (२) अत्यानत—बहुत मुड़ा हुआ (Well-curved, अति वक्र)। आधुनिक विज्ञान में भी यह अनेक प्रकार के मिलते हैं, यथा Eye

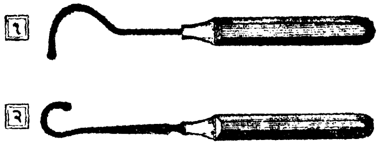
‡"शरपुंखमुखं दन्तपातनं चतुरांगुलम् ॥३२॥" (अ० हृ० सू० अ० २५)—अर्थात् शरपुंखमुखी शलाका ४ अंगुल लम्बी दन्तपातनार्थ होती है। वाग्भट का यह यन्त्र आधुनिक Dental Stump Elevator (चित्र २०) के सदृश्य है। इस सम्बन्ध में अरुणदत्तकृत टीका



दन्तपातक (Tooth Elevater)

पढ़ने योग्य है, यथा- "शरेति—शरपुंखाख्यं चतुरांगुलं दन्तपातनं स्यात्। अनेन हि दन्ताश्चलन्तः पात्यन्ते कृम्यादिभक्षिता वा।"—अर्थात् शरपुंख यन्त्र ४ अंगुल दन्तपातनार्थ होता है। इससे हिलते हुए वा कृमिभक्षित दांत गिराये वा निकाले जाते हैं। इस वाक्य की तुलना आधुनक अंग्रेज़ी शब्दों से कीजिये—

"Elevator:—This is a valuable instrument,-



चित्र २१

वडिशयन्त्र§ (Hooks)

१. किंचिदानत । २. अत्यानत ।

Hook (नेत्रों के लिए), Lens Hook (नेत्रताल को निकालने के लिए मोतियाबिंद के शस्त्रकर्म में), Midwifery Hook (प्रसवकार्यों में)¹, Tonsil Hook (गलग्रन्थि को उठाने वा बाहर निकालने के लिए) इत्यादि । इनका प्रयोजन नाम से ही स्पष्ट है ।

used to remove badly broken or decayed stumps in the lower jaw." (A Guide to Surgical Instruments)—अर्थात् एलिवेटर एक उपयोगी यन्त्र है, जो बुरी तरह से टूटे हुए (दुर्भग्न) वा कीटादि से भक्षित (गले हुए) दांत (निचले जबड़े के) निकालने के काम आता है ।

§"आहार्ये वडिशाकृती ॥२६॥" अ० हृ० सू०अ० २५—वडिशाकार दो शलाकायें आहरणार्थ प्रयुक्त होती हैं । "आहार्ये आकर्षणे वडिशाकारौ"—इति अरुणदत्तः ।

१. वडिशयन्त्र के प्रसंगवश श्री वाग्भट ने गर्भशङ्कु का वर्णन किया है, यथा—"नतोऽग्रे शङ्कुना तुल्यो गर्भशङ्कुरिति स्मृतः ॥ ३० ॥ अष्टांगुलायतस्तेन मूढगर्भं हरेत् स्त्रियाः ॥३१॥" (अ० हृ० सू० अ०

पुनः यह Single Hooks (एकबडिश—एक हुक वाले) और Double Hooks (द्विबडिश—दो हुकों वाले) दो प्रकार के हैं। चित्र २१ में हम ने एकबडिस दिखाये हैं। यदि एक दण्ड (Shaft) पर दो हुक एकत्र हों, जैसे रिट्रैक्टर (चित्र १८ ख) में, तो उसे डबल हुक कहेंगे।

यह ध्यान रहे, कि बडिशयन्त्र स्थूलमुख (Blunt) होने चाहियें।[1]

२५)—अर्थात् आगे से मुड़ा हुआ (वक्राग्र), शङ्कु (Hook) के तुल्य गर्भशङ्कु कहलाता है। ८ अंगुल (वा अष्टादशांगुल इति पाठा-



चित्र २२ (गर्भशंकु)

न्तरम्) लंबा, उस से मृत वा मूढ़गर्भ खैंचकर बाहर निकाला जाता है। इसे आजकल प्रसवयन्त्रों (Midwifery Instruments) में Blunt Hook with Crochet कहते हैं (देखो चित्र २२)। इस का एक सिरा बड़ा है, जिसे Blunt Hook (स्थूलाग्र वडिश) और दूसरे सिरे को Crochet (क्रोशिया तुल्य होने से) कहते हैं। मूढ वा मृत भ्रूण के क़पाल को भिन्न कर के गर्भ शंकु से उसे बाहर खैंच लिया जाता है।

१. इस प्रसंग में 'अश्मर्याहरणे सर्पफणावद्वक्रमग्रत:। —वाग्भट ने अश्मरीशंकु का भी उल्लेख किया है। उस का मुख (अग्रभाग) सर्पफणावत् होना चाहिये। हम तालयंत्रों में अश्मरीनिष्कासक यंत्र भी दिखा चुके हैं (देखो चित्र ६)। यह भी वहां काम दे सकता है। (शेष अग्रे)

(५) मसूरदलमात्रमुखे द्वे — मसूरदलमुखी शलाकायें [१] दो होती हैं। इन का अग्र कुछ मुड़ा हुआ, यह कर्णनासामुखादि स्रोतों से शल्य (मल, कीटादि) आहरणार्थ प्रयुक्त होती हैं। यह भी एक प्रकार की Scooped Probes हैं। तालयंत्र (Scoop) में मुख कुछ गहरा है और मसूदलमुख में अग्रभाग चपटा होता है। मैं ने कई नापितों के पास ऐसे नखशस्त्र देखे हैं, जिन का एक सिरा नख काटने के लिए और दूसरा मसूरदलवत् चपटा और गोल कर्णशोधनार्थ होता है। एक ही यंत्र उभयार्थकृत् हो जाता है।

(६) षट् कार्पासकृतोष्णीषाणि—"तूलवेष्टिताग्राणि" (डल्हण)—अर्थात् जिन के अग्रभाग वा सिरे पर कार्पास (तूल) का खण्ड (Swab) लगा हो, उन्हें कर्पास वा तूलशलाकायें (Swab probes) कहते हैं। उष्णीष

एवं वाग्भट ने छः शंकु माने हैं, यथा "शङ्कवः षट्" (अ० हृ०) इन में से दो अहिफणा, दो वडिश, १ गर्भशंकु और १ अश्मरी शंकु—इस प्रकार ६ संख्या पूरी होती हैं।

१. "स्रवोभ्यः शल्यहारिणी। मसूरदलवक्त्रे द्वे स्यातामष्टनवाङ्गुले ॥ २८॥" (अ० हृ० सू० अ०—२५) कर्णादि स्रोतों से शल्याहरणार्थ दो शलाकायें ८ और ९ अंगुल लंबी होती हैं। मसूर की दाल के दानों के तुल्य इन का मुख होता है। अतः उन्हें मसूरदलमुखी शलाकायें कहते हैं। प्रमाण—'मसूरदलमिव वक्त्रं ययोस्ते मसूरदलमुखे" (इति अरुणदत्तः)। इन का एक और रूपान्तर वाग्भट ने लिखा है, 'कर्णशोधनमश्वत्थपत्रप्रांतं स्रुवाननम् ॥३४॥" (अ० हृ० सू० अ० २५)—एक कर्णशोधनी शलाका (Ear Scoop) हम पीछे चित्र १२ (३) में दिखा चुके हैं। चक्रदत्त ने भी इस का वर्णन किया है, यथा "क्लेदयित्वा तु तैलेन स्वेदेन प्रविलाप्य च। शोधयेत् कर्णगूथं तु भिषक् सम्यक् शलाकया ॥" (चक्रदत्तः कर्णरोगे)

पगड़ी (Turban) को कहते हैं। उस की तरह कपास शलाका के सिर पर लिपटी रहती है। गले में दवाई लगाने वा कर्णशोधानार्थ इन्हें बरता जाता है। इन की लंबाई स्थानानुसार भिन्न २ हो सकती है। इन की क्रिया प्रमार्जन वा प्रोञ्छन (पोंछना) है। वाग्भट का मत नीचे देखिये। उस ने इन ६ शलाकाओं (Long probes) को पुनः ३ भेदों में बांट दिया है[१]।

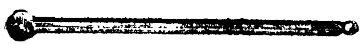
(७) खल्लमुखी शलाकायें (Spoon-shaped Probes)—यह ३ होती हैं,[२] आकृति चमचे (Spoon) की तरह। क्षार, तैलादि

१. कार्पासविहितोष्णीषाः शलाकाः षट् प्रमार्जने। पायावासन्नदूरार्थे द्वे दशद्वादशाङ्गुले ॥ ३३ ॥ द्वे षट्सप्ताङ्गुले घ्राणे द्वे कर्णेऽष्टनवाङ्गुले।
[अ० हृ० सू० अ० २५]

६ शलाकायें ऐसी हैं, जिन के सिरे कार्पास से वेष्टित हैं। इन में से दो गुदा के लिए एक आसन्न (निकट) वर्ती शल्य के लिए और दूसरी (गुदा में) दूरवर्ती शल्य के लिये, यह यथाक्रम १० और १२ अंगुल लंबी होती हैं। दो घ्राण (नासा) के लिये ६ और ७ अंगुल॥ दो कर्ण के लिये ८ और नव अंगुली। इन के आगे "कर्णशोधन-मित्यादि" पाठ है, जो हम पीछे उद्धृत कर चुके हैं। प्रत्येक प्रकार में दो दो प्रमाण दिये हैं। छोटा निकट स्थान वा बच्चों के लिये और बड़ा प्रौढ़ों के लिये। साधारणतया अथवा लोहशलाका के अभाव में तृण, काष्ठ, वंशादि की शलाका, जिसे लोकभाषा में तीला कहते हैं, प्रयोग की जा सकती है।

२. वाग्भट का मत इस विषय में यह है—"अष्टांगुला निम्नमुखास्तिस्रः क्षारौषधक्रमे। कनीनी—मध्यमाऽनामी—नखमान-समैर्मुखैः॥ ३७॥" (अ० हृ० सू० अ० २५)—अर्थात् ८ अंगुल लंबी, निम्नमुख (गंभीर-deep), कनिष्ठा (सब से छोटी अंगुली, Little finger), अनामिका (Ring finger) और मध्यमा (Middle finger) के नखों—

कर्ण, नासादि में डालने के लिये। इसे छोटी कड़छी वा चमचा वा आधुनिक Medicine Spoon समझना चाहिये। एक Cataract spoon भी आज कल लिंगनाश (मोतिया बिन्द) में ताल (Lens) निकालने के काम आता है। क्षार (Caustic), अम्ल (Acid) अथवा मर्हम लगाने के लिये अब एक काच दण्डी (Glass probe) व्यवहार की जाती है। (देखो चित्र २३)। इसका ऊपर का सिरा (१)



1　　2

चित्र २३ काचदण्डी
१. ग्रहस्थान २. बिन्द्वाकार

चपटा और गोल होता है और निचला सिरा (२) गण्डूपद-मुखाकार (Bulbous), जिसे क्षारादि औषध में डुबाने से उसकी तनु मात्रा (बिन्दु-मात्र) लग जाती है। इस से अतियोग का भय नहीं रहता।

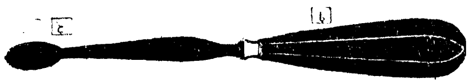
तैलादि के प्रयोग के लिये चाय का छोटा चमचा (Tea Spoon) भी व्यवहृत हो सकता है।

(८) अग्निशलाकायें[1] (Cautery Probes)—अर्श (Piles), दुष्ट व्रण (Foul ulcers), अर्शकील, अर्बुदादि को जलाने के लिये। प्राचीन

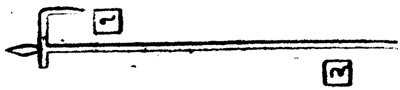
(Nails) के आकार वा प्रमाण के मुख (अग्र भाग) होने चाहियें। उनका कार्य क्षार, औषधादि का प्रणिधान करना है। सुश्रुत की अपेक्षा यह वर्णन अधिक स्पष्ट है।

१. "शलाकाजाम्बवोष्ठानां क्षारेऽग्नौ च पृथक् त्रयम्। युञ्ज्यात् स्थूलाणु-दीर्घाणाम्" [अ० हृ० सू० अ० २५]—क्षार और अग्निकर्म में पृथक् २ स्थूल, अणु और दीर्घ शलाकायें तथा जांबवोष्ठ यन्त्रों का प्रयोग करे। एवं वाग्भट ने इस श्लोक में ६ शलाकाओं और ६ जांबवोष्ठों का वर्णन किया है, जिन में से ३-३ क्षारकर्म में और ३-३ अग्निकर्म में विधेय हैं। इन के अतिरिक्त एक और अर्द्धेन्दु शलाका (Half

काल में अग्निकर्म (Cautery) का प्रयोग किया जाता था। (देखो सु० सू० अ० १२)। एतदर्थं सुश्रुत ने ६ शलाकायें बताई हैं। "त्रीणि जांबववदनानि, त्रीणि अंकुशवदनानि, षडेवाग्निकर्मसु अभिप्रेतानि"—यह पुनः दो प्रकार की हैं (क) जांबव-



चित्र २४ जाम्बव मुख
१ हस्तग्रह २ जांबव



चित्र २५ अंकुशवदन
१ अंकुश २ शलाका

मुखी (Bulbous Cautery Probes)—"जम्बुफलमुखाकृतीनि" (डल्हणः), अर्थात् जो जामुन के फल सदृश अण्डाकार (Bulb-like) हो (चित्र २४) और (ख) अंकुशमुख (Hook-like) अंकुश [चित्र २५] की तरह कुछ मुड़ी हुई। इनका हस्तग्रह काष्ठ अथवा काच (शीशे) का हो, तो उत्तम होगा, अन्यथा लोह उष्ण होकर प्रयोग-कर्ता के हाथ को जला देगा। आजकल अग्निकर्म के लिये प्लैटिनम तार (Platinum wire) का प्रयोग किया जाता है। यह तार काचदण्डी में लगी रहती है और सुनम्य होने से इस की आकृति (गोलादि) शीघ्र बदली जा सकती है (देखो चित्र २६)—

moon-like rod) अर्धचन्द्राकार शलाका का वर्णन किया है, जो अन्त्रवृद्धि के दहनार्थ प्रयुक्त की जाती थी। "शलाकामन्त्रवर्त्मनि। मध्योर्ध्व-वृतदण्डां च मूले चार्द्धेन्दुसन्निभाम्॥ ३५॥" (अ० हृ० सू० अ० २६) अर्थात् एक शलाका अन्त्रवृद्धि (Hernia) में प्रयोग करे, जो मूल में अर्धचन्द्राकार हो और जिसकी दण्डी मध्य से ऊपर वृत्त (गोल) हो। प्रसंगवश यह शलाका भी दहनक्रिया के लिए है। अर्धचन्द्र दरान्ती जैसे यन्त्र लिये भी प्रयुक्त हो सकता है। पशुओं को उस से

इस को काचदण्डी से पकड़ कर और तार का



चित्र २६ प्लैटिनम तार
१काचदण्डी २ प्लै० तार

अन्तिम सिरा मद्यसार प्रदीप [Spirit lamp] की ज्वाला में रखकर जब वह तार रक्तवर्ण हो जावे, तो उसे निकालकर अर्श आदि के दहनार्थ प्रयोग किया जा सकता है। आजकल डाक्टर विद्युत् (बिजली) धारा [Electric current] द्वारा प्लैटिनम तार को गरम करके प्रयोग करते हैं।—इसे Electric Cautery (विद्युदग्निकर्म) कहते हैं; यहां प्लै० तार का एक सिरा काच नली [Glass tube] में से गुज़ारा जाता है और दूसरा सिरा विद्युत् यन्त्र से जोड़ा जाता है। जाम्बवमुख ३ प्रकार के अर्थात् स्थूल, मध्य और अणु और अंकुश भी तीन बताये गए हैं, जो बृहद्, मध्य, और ह्रस्वाकार हो सकते हैं। इन के हस्तग्रह भी यथायोग्य लंबाई के होने चाहियें।

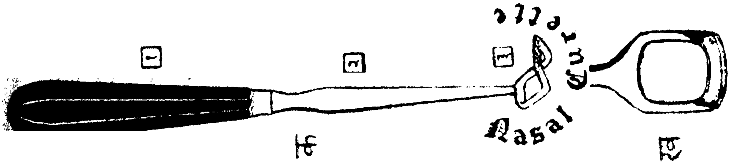
आजकल दागा वा चिन्हित किया जाता है। आकृति चित्र २७ में देखो। दण्ड यहां काष्ठ का होता है और अर्द्धेन्दु लोह का। किसी के



चित्र २७ अर्द्धेन्दु शलाक १ अर्ध चन्द्र २ हस्तग्रह

मत में यह Truss है, जो अन्त्रवृद्धि में कटि पर बांधी जाती है। परन्तु यहां प्रसंग क्षार और अग्निकर्म का है। सु० चि० अ० १६ में "वंक्षणस्थां तां दहेदर्धेन्दुवक्त्रया।" इस वचन से दहन का स्पष्ट प्रमाण मिलता है।

(६) नासार्बुदी शलाका[1]—यह सुश्रुत के अनुसार बदरास्थि-दल सदृश, खरलवत् गहरे और तीक्ष्ण ओष्ठयुक्त मुख वाली होनी चाहिये, अर्थात् शलाका, दण्डी वा Handle के आगे एक छोटे खरल के सदृश स्थूल भाग हो, जिस से नासार्बुद काट कर निकाल दिया जावे। 'तीक्ष्णोष्ठ' शब्द से इसे शस्त्रों की श्रेणी में गिनना चाहिये था, यन्त्र तो स्थूलमुख (Blunt) होते हैं। कई विद्वानों ने इसे Nasal



Curette (नेजल क्यूरिट) माना है। यह अशुद्ध है। (चित्र २८) इसकी आकृति (चित्र २८ में देखो)। हस्तग्रह (क, १) के आगे स्थूल शलाका (क, २) के साथ क्यूरिट(curette) (क, ३) लगा है। यह शस्त्र Adenoids जो गले में ऊपर की ओर गलशुण्डी(Uvula-काक) के पीछे श्वासमार्ग को अवरोध करने वाली छोटी ग्रन्थियां सी होती हैं, काटने के काम आता है। इसे मुख में डाल कर गले (Pharynx) के भीतर अग्रभाग (ख) को ऊपर करके ग्रन्थियों (Adenoids) को काटा जाता है। इस कारण इसे Adenoid Curette भी कहते हैं। यहां नासार्बुद से अभिप्राय Nasal Polypus है, जो नासा के भीतर अस्थि पर अर्बुदवत् वृद्धि (Growth) सी होती है। यह प्रायः पीनस में हो जाती है। इसे काटने के लिये

---

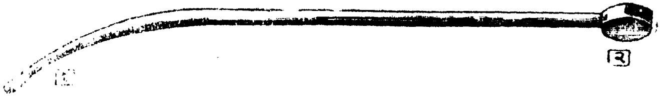
१ 'कोलास्थिदलतुल्यास्या नासार्शोऽर्बुददाहकृत् ॥ ३६ ॥' (अ० हृ० सू० अ० २५)—वह शलाका, जिस का आस्य (मुख) कोलास्थिखंड (बदरास्थि-अर्द्धभाग) तुल्य हो, नासार्श (नाक के भीतर दाने वा मांसाङ्कुर) और नासार्बुद (Polypus or tumour in the nose) के दहनार्थ (जलाने के लिये) प्रयुक्त की जाती है। सुश्रुत ने इसे दाह के लिये नहीं लिखा। यहां दोनों का मतभेद है।

आजकल Nasal Polypus Snare नामक शस्त्र का प्रयोग किया जाता हैं, जिस में हस्तग्रह (Handle) के आगे एक वक्र तार लगी रहती है। इसे अर्बुद के मूल में डाल कर उसे पृथक् कर दिया जाता है। यह भी शस्त्र है । प्रसंगवश Curette और Snare दोनों का यहां वर्णन किया गया है ।

(१०) अञ्जनशलाका (Eye-rod)–यह नेत्रों में अंजन (सुरमा-Collyrium) लगाने की साधारण शलाका है, जिसे सुरमचू कहते हैं । यह प्राय: गोल, परन्तु मध्य में कुछ मोटी वा चतुष्कोण हुआ करती है । दोनों सिरे पुष्पमुकुल (कुसुमकलिका) वत् स्थूल तथा मसृण (मृदु) होने चाहियें, ताकि नेत्रों को क्षत न करें। यह शलाकायें ताम्र, यशद, पित्तल, सीसक और जर्मन सिलवर की बनी हुई छोटी वा बड़ी मिलती हैं, जो अवस्था तथा रोगानुसार व्यवहार की जाती हैं, जैसा कि "प्रस्ता लेखने ताम्री, रोपणे काललोहजा" (चक्रदत्त), एवं "ताम्रलोहाश्मसंजाता शलाका लेखने मता ।। सुवर्णरजतोद्भता शलाका स्नेहनेमता ॥७२॥ अगुंली च मृदुत्वेन कथिता रोपणे बुधैः ।। [शा० उत्तरखण्डे अ० १३] इत्यादि प्रमाणों से भी स्पष्ट है ।

(११) मूत्रमार्गशोधनी शलाका (Urethral Bougie)– यह सुश्रुत के अनुसार मालतीपुष्प (चंबेली] के फूल की नाल के सदृश पतली और गोल होनी चाहिए। इस का प्रयोजन मूत्रमार्ग (Urethra) का शोधन है । पूयमेह (उष्णवात आदि रोगों के कारण कभी २ मूत्रमार्ग तंग व बन्द हो जाता है, जिस से मूत्रकृच्छ्रादि होकर रोगी को बहुत कष्ट होता है—इसे अंग्रेजी में Stricture of the Urethra कहते हैं। इस की निवृत्ति के लिए मूत्रमार्ग को उक्त शलाका (Bougie—बूजी) से खुला (Dilate) किया जाता है। अतः बूजी को Dilating Sound or Stricture Bougie भी कह देते हैं। यह चित्र २६ में दिखाई गई है। बूजी भीतर में ठोस होती है, आगे से पतली और पीछे शनैः २ मोटी होती जाती है। अन्त (३) में चपटी (Disc-like) होती है। जहां से इसे

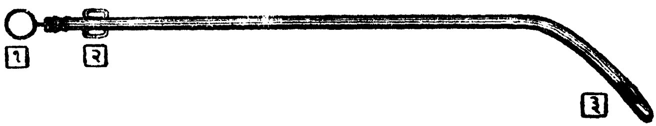
पकड़ कर मूत्रमार्ग में शनैः २ प्रवेश किया जाता है। यह भिन्न २ नम्बरों की होती हैं। मेढ़ू में प्रवेश से पूर्व इसे स्निग्धं कर लेना



चित्र २६ मूत्रमार्गशोधनी शलाका (Bougie)

चाहिए। पहिले छोटे नं० ४ से आरम्भ करो। पुनः शनैः २ नं० १२ वा १८ तक प्रयोग करो। इस का प्रयोग रोगी को लिटा कर और मेढ़ू को दृढ़ता से पकड़ कर करना चाहिए।

मूत्राघात (Retention of Urine) में आजकल कैथीटर (Catheter) का प्रयोग किया जाता है। यह भीतर से पोला (रिक्तगर्भ) और आगे वक्र (Curved) होता है। इस में एक तार



चित्र ३० कैथीटर (पुरुषों के लिए) १. तार का चक्र,
२. कर्ण ३. नेत्र (eye)

सी लगी रहती है, जो उसे शोधनार्थ काम आती है (देखो चित्र ३०)। इस के अग्र भाग में दोनों ओर आंखें (नेत्रवत् छिद्र—Eyes) होती हैं। जब यह भाग मूत्राशय में पहुंच जाता है, तो मूत्र इन छिद्रों में प्रवेश कर के नाली द्वारा बाहर आ जाता है। यह भी कई प्रमाणों (sizes) के होते हैं। अर्थात् नं० ४ से १८ तक, जो

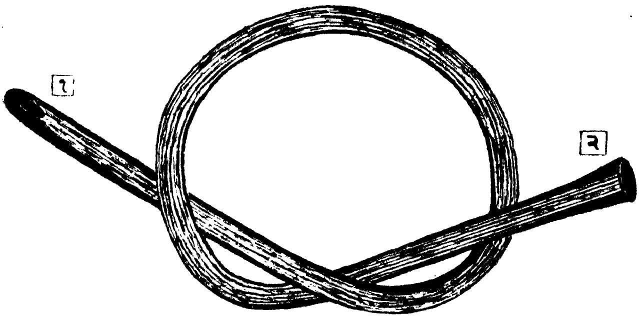
अवस्थानुसार प्रयुक्त होते हैं। प्रौढ़ पुरुष के लिए नं० १० प्रायः बरता जाता है।

पुरुषों के लिए कैथीटर लम्बा और टेढ़ा होता है, स्त्रियों के लिए



चि० ३१ योषितां मूत्रवाहिनी (Female Catheter)

छोटा और सीधा (देखो चित्र ३१)। यह पुनः धातु और रबर दो प्रकार के होते हैं। धातुकृत का प्रयोग कुछ कठिन है, परन्तु रबर



चित्र ३२ रबर कैथिटर १ नेत्र २ अन्त

का सुगम। चित्र ३० और ३१ में धात्विक कैथीटर (Metallic Catheters) हैं और चित्र ३२ में रबर कैथीटर।

निम्न वर्णन ध्यान में रखो :--

CATHETERS : Are hollow instruments used to withdraw urine from the bladder. They are of three types of catheters—metal, gum-elastic[1] and rubber ones.

१. हमने इसका वर्णन नहीं किया। यह प्रयोग में कम आता है।

(a) MALE CATHETER[1] is suitably curved as the urethra. Eyes are large enough, one on either side. There are two rings fixed to the outer end, one on each side. They are used in tying the catheter in the bladder with a tape. Sizes vary from No. 4 E to 18 E.

(b) FEMALE CATHETER: Has not got such a well-defined curve as in the male. It is shorter.

RUBBER CATHETER: Though hollow throughout, its distal end beyond the eye is solid for easy introduction. Whenever a catheter is used, first always pass a rubber one.

ADVANTAGES: Rubber catheters are easy to pass practically without any complications—no irritability, no bleeding and no false passage.

DISADVANTAGES: (a) Being too flexible, they are less easily directed through a stricture.

(b) Repeated boiling destroys the rubber.

---

१. हमारे विचार में Catheter को मूत्रवाहिनी नाली कहना चाहिए। सुश्रुतोक्त पाठ में मालतीपुष्प का नेत्र भी सच्छिद्र होता है, जिस से मूत्रवाहन का भाव सिद्ध है।

इन वचनों का संक्षिप्त आशय हमने ऊपर दे दिया है। वस्तुतः कैथीटर नाडीयन्त्रों में गिने जाने चाहिएं। बूजी (Bougie) ठोस होने से शलाका-यन्त्र है।

प्रसंगवश Sound [सौंड—अश्मरीपरीक्षक] का वर्णन करना भी आवश्यक है। यह यन्त्र [चित्र ३३] मूत्राशयगत अश्मरी [Bladder Stone] की जांच के लिए बरता जाता है। यह धातुकृत [Metallic] और एक जैसी मोटाई का होता है। भीतर से रिक्त और वजन में हलका है। कैथीटर की तरह इस की आंखें [eyes] नहीं होतीं। वक्रता [curve] कम होती है। इस के अन्त पर प्रायः चक्रिका [disc] होती है, जिस पर नंबर लगे रहते हैं। परन्तु चित्र ३३ में प्रदर्शित सौंड के अन्त में एक वर्तुलाकार रिक्तगर्भ हस्तग्रह [Hollow Cylindrical Handle] है। यह शब्द (नाद) के बढ़ाने के लिए है। इस का प्रयोग पत्थरी की जांच के लिए किया जाता है। पत्थरी एक है वा दो, छोटी है वा बड़ी, इत्यादि बातों का ज्ञान इस सौंड से हो जाता है। यदि इस से ठीक ज्ञान न हो, तो X-Ray कराना चाहिए।

निम्न वर्णन ध्यान से पढ़ो :—



चित्र ३३ अश्मरी—परीक्षक (Sound)

STONE SOUND :—Made of metal; same thickness throughout; the instrument being

hollow within is light in weight. Has got no eyes at the end like a catheter ; curve is shorter also. There is a sort of mark at the handle to show the direction of the beak ; sometimes numbers are marked, instead to show the size of the sound. The handle is grooved to facilitate its turning by the fingers.

USES :—To detect the presence or absence of the stone.

[i] To detect the number of stones---single or multiple.

[ii] The size of the stone---big or small.

[iii] The density of the stone---soft or hard.

[iv] The situation of the stone---encysted or free.

इस का संक्षिप्त आशय ऊपर दे दिया गया है।

सौंड[1] स्त्रियों के लिए पृथक् होती है और छोटी। इन यन्त्रों की पूर्ण प्रयोगविधि किसी दक्ष से सीखनी चाहिए[2]।

---

१. सौंड (Sound) अंग्रेजी में शब्द को कहते हैं। इस यन्त्र का नाम सौंड इस लिए रखा गया है, कि जब इस यन्त्र का अगला सिरा मूत्राशय में पत्थरी के साथ टकराता है, तो एक विशेष प्रकार का शब्द टक् टक् (Characteristic click) सुना जाता है।

२. वाग्भट ने सू० अ० २५ में "स्वं स्वमुक्तानि यन्त्राणि मेढ्रशुद्ध्यञ्जनादिषु ॥३८॥"—यह वचन दे कर इस विषय को समाप्त कर दिया है।

१३. उपयन्त्राणि

(Auxiliary or Accessory Instruments)

उपयन्त्राण्यपि — रज्जुवेणिकापट्टचर्मान्तर्वल्कललतावस्त्राष्ठीलाश्ममुद्गरपाणिपादतलाङ्गुलिजिह्वादन्तनखमुखवालाश्वकटकशाखाष्ठीवनप्रवाहणहर्षायस्कान्तमयानि क्षाराग्निभेषजानि चेति ॥ १५ ॥

(सु० सू० अ० ७)

उपयन्त्र (सहायक यन्त्र) भी २५ हैं, यथा—(१) रज्जु, (२) वेणिका, (३) पट्ट, (४) चर्म, (५) अन्तर्वल्कल, (६) लता, (७) वस्त्र, (८) अष्ठीलाश्म (९) मुद्गर, (१०) पाणिपादतल, (११) अंगुलि (१२), जिह्वा (१३) दन्त, (१४) नख, (१५) मुख, (१६) बाल, (१७) अश्वकटक, (१८) शाखा, (१९) ष्ठीवन, (२०) प्रवाहण, (२१) हर्ष, (२२) अयस्कान्त, (२३) क्षार, (२४) अग्नि और (२५) भेषज।

एतानि देहे सर्वस्मिन् देहस्यावयवे तथा।
सन्धौ कोष्ठे धमन्यां च यथायोगं प्रयोजयेत् ॥ १६ ॥

(सु० सू० अ० ७)

यह उपयन्त्र[1] समग्र देह में तथा शरीर के अवयवों में, सन्धि, कोष्ठ और धमनी में यथायोग्य व्यवहार करे।

वक्तव्य—उपर्युक्त २५ वस्तुएं उपयन्त्र (सहायक यन्त्र) कहलाती हैं। जिस प्रकार उपप्रधान वा उपमन्त्री प्रधान वा मन्त्री की सहायता वा स्थान पर कार्य करते हैं, यह उपयन्त्र भी यन्त्रों के सहायक हैं, जैसा कि निम्न वक्तव्यों से स्पष्ट होगा :—

---

१. श्री वाग्भट ने उपयन्त्रों को अनुयन्त्र की संज्ञा दी है, परन्तु उस ने सुश्रुतोक्त कुछ उपयन्त्र छोड़ दिये हैं और कुछ नवीन लिखे हैं। यथा—"अनुयन्त्राण्ययस्कान्तरज्जु-वस्त्राऽश्म-मुद्गराः। पट्टान्त्र-जिह्वावालाश्च शाखा-नख-मुख-द्विजाः ॥३९॥ कालः पाकः करः पादो-

(१) रज्जु— " मुञ्जादिविरचितो गुणः " (डल्हणः)—रज्जु डोरी, रस्सी वा सूत्र को कहते हैं, जो मुञ्ज, कार्पास, शण आदि से निर्मित होती है। सूत्र (Thread) का प्रयोग न केवल व्रणों के सीवन (Suturing) में आता है, अपितु उसे क्षारादिभावित कर के अर्श, भगन्दर, नाडी-व्रणादि में प्रयुक्त किया जाता है, तथा सर्पविष के वेग को रोकने के लिये और शस्त्र कर्म के समय रोगी के अंगों को बांधने (Ligature) के लिये भी मोटी रस्सी (Rope) का व्यवहार होता है।

(२) वेणिका---'गुणत्रयग्रथिता' (डल्हणः)—डोरी (Twine thread, cord)—यह रज्जु से अधिक दृढ़ होती है। प्रयोग तद्वत्। पतंग में भी यही डोरी लगती है।

भयं हर्षश्च तत्क्रियाः। उपायवित् प्रविभजेदालोच्य निपुणं धिया ॥४०॥" (अ० हृ० सू० अ० २५)—अर्थात् अनुयन्त्र (Supplementary Instruments — अनुगामी यन्त्र) अयस्कान्त, रज्जु, वस्त्र, अश्म, मुद्गर, पट्ट, आन्त्र (अन्त्रकृत), जिह्वा, बाल, शाखा, नख, मुख, द्विज (दांत), काल, पाक, कर, पाद, भय और हर्ष १६ हैं। उपाय जानने वाला वैद्य बुद्धि से उन की क्रियाओं को सम्यक् विचार कर के विभक्त करे (वा उन्हें बरते)। वाग्भट ने वेणिका, अन्तर्वल्कल, लता, अंगुली, अश्वकटक, ष्ठीवन, प्रवाहण, क्षार, अग्नि और भेषज—यह दस सुश्रुतोक्त उपाय छोड़ दिये हैं, और चार नवीन अनुयन्त्र—आन्त्र, काल, पाक और भय-वर्णन किये हैं, जिनके उपयोग यह हैं :—

(१) आन्त्र—"आन्त्रं मेषादिनां शुष्कान्त्रमिति ख्यातं शस्त्रच्छेदानन्तरं सूक्ष्मसिरादिबन्धनादिषु युज्यते।" (वाग्भटार्थकौमुदी)—अर्थात् मेष, अजादि की शुष्क अन्त्र (Dried Intestines) को आन्त्र कहते हैं। यह छेदन के अनन्तर सूक्ष्म सिरादि के बन्धन (Ligature) के लिये काम आता है। वाग्भट से पर्व किसी आचार्य ने आन्त्र-

(३) पट्ट (Silk Cloth)---यह पट्टी (Bandage) अथवा किसी अंग पर लपेटने के लिये व्यवहार में आता है। अंग्रेजी का 'बैंडेज' शब्द संस्कृत के 'बन्ध्' वा बन्धन का अपभ्रंश है।

(४) चर्म (Leather)—यह भी अंगों को बांधने, जैसे सर्पविष वा जलोदर में, जलनिष्कासन के अनन्तर, उदर पर आवेष्टन के लिये प्रयुक्त होता है, यथा "गुदभ्रंशे गुदं स्विन्नं स्नेहाभ्यक्तं प्रवेशयेत्। कारयेत् गोफणाबन्धं मध्याच्छिद्रेण चर्मणा।" (सुश्रुत)--गुदभ्रंश में गोफणाबन्ध चमड़े का ही बनता है। आज कल भी शस्त्रकर्म करते समय रोगी को Leather Straps से काबू किया जाता है। शस्त्रकोष (Instrument box) आदि के निर्माण में भी काम आता है। गोफणादि बन्धनों की व्याख्या चित्रसहित मेरठनिवासी पं० श्रीगणेशदत्त वैद्य की पुस्तक में देखें।

का नाम नहीं दिया। यह बुद्धकालीन आविष्कार समझना चाहिये। यह आधुनिक शल्यविज्ञान में भी प्रयोग किया जाता है और कैटगट (Catgut, बिडालान्त्र) के नाम से प्रसिद्ध है, और मेष की शुष्क आंतों से सूत्रवत् (Fine-thread like) बनता है। यथा—

CAT-GUT :— "Now prepared from the intestines of the sheep by thoroughly scraping away the mucus membrane from their wall."—*A Guide to Surgical Instruments.* अब (अर्थात् पहिले यह बिडालान्त्र से तैयार होता था और अब) भेड़ (मेष) की आन्त्र से बनता है। उन की श्लैष्मिक कला सर्व प्रशम दूर कर दी जाती है। (और पुनः अन्त्र को धूप में शोषण कर के सूत्र बनाये जाते हैं)। फिर Tincture of Iodine अथवा Chromic acid में इसे शुद्ध [Sterilised] किया जाता है। यह

(५) अन्तर्वल्कल (Inner bark of a tree)—"वल्कलं पलाशोदुम्बरादीनां त्वक्, सा च भग्नादिबन्धनयन्त्रार्थम्" (डल्हणः)—पलाशादि वृक्षों की भीतरी छाल, जो मृदु और सरल होती है, भग्न (Fracture) आदि के बन्धन तथा नियन्त्रणार्थ काम आती है। आजकल एतदर्थ Splints (खपच्चियाँ—कुशा) का व्यवहार होता है। इन का वर्णन भी पूर्वोक्त पुस्तक एवं सुश्रुत में देखें। कहीं २ पाठ 'चर्मान्तवल्कल' मिलता है। तब चर्मान्त और वल्क ऐसा अर्थ करें। चर्मान्त का प्रयोजन भी चर्म से ही सिद्ध होता है, और वल्कल से अन्तर्वल्कल जानें

सूत्र भिन्न २ मोटाई के शीशियों में बन्द मिलते हैं।

प्रयोग—शस्त्रकर्म के अनन्तर सिरा, स्नायु आदि को सीने वा बांधने के काम आता है। वस्तुतः यह आविष्कार आयुर्वेद का ही है। आन्त्र को उबालना नहीं चाहिये, अन्यथा यह गल कर नष्ट हो जावेगा।

(२) काल [Time]—काल यद्यपि यन्त्र नहीं, तो भी विद्रधि, व्रणशोथादि के पकने [Suppuration] और फट कर भरने [रोपण-healing] में समय की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। "Time is the best healer." सुश्रुत ने भी क्रियाकालः का अन्यत्र वर्णन किया है। (देखो सु० सू० अ० २१)।

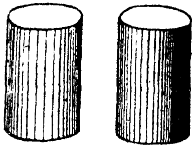
(३) पाक[Suppuration]—व्रणों के पाक की प्रतीक्षा करना आवश्यक है। एतदर्थ सुश्रुत सूत्र अ० १७ (आमपक्वैषणीयोऽध्यायः) देखना चाहिये। एवं ज्वरादि में भी दोषपाक की प्रतीक्षा की जाती है।

(४) भय [Fear]—हर्ष के साथ भय भी आवश्यक है। जब रोगी शस्त्रकर्म के समय काबू में न आए वा कोलाहल करे, तो उसे डरा धमका कर [विशेषतः बच्चों को] चुप करा दिया जाता है। तब वह

(६) लता (Creeper, twine)-गुडूच्यादिलता (प्रतानिनी वेलिरिति डल्हणः) भी रज्जुवत् बन्धनार्थ काम आ सकती है। किसी समय जंगल में जहाँ रज्जु आदि न मिले, सर्पदंश में लता से ही बन्ध (ligature) लगाया जा सकता है।

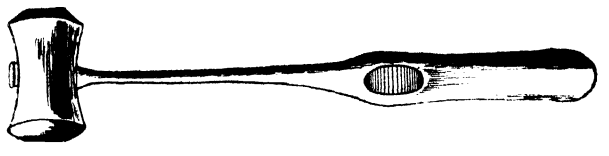
(७) वस्त्र (Cotton cloth)-कर्पट (कपड़ा) पट्टियों के बनाने तथा वक्ष, उदरादि पर बाँधने के काम आता है। तनुवस्त्र (Lint Gauze) तैलादि से आक्त व्रणों में (For dressings) दिया जाता है। पट्ट, चर्मादिवत् ही इसका प्रयोग जानें।

(८) अष्ठीलाश्म (दीर्घवर्तुलपाषाण इति डल्हणः–Round stone)—



चित्र ३४ अष्ठीलाश्म

देखो चित्र ३४। इस वा अन्य आकार के पाषाणों का प्रयोग अस्थिशल्य के चालनार्थ तथा अंजलिभग्न में पाणितल में धारणार्थ किया जाता था।



चित्र ३५ मुद्गर (Mallet)

(९) मुद्गर (Hammer wooden or metallic, काष्ठादिकृतः डल्हणः)-काष्ठ अथवा लोहे की बनी हथौड़ी वा मुंगली (Mallet)

शस्त्रकर्म की पीड़ा सहन कर लेता है। चरक ने भी उन्मादोपचार में "त्रासयेयुर्नंषेनैनं तर्जयन्तो नृपाज्ञया ॥ ८६ ॥ देहदुःखभयेभ्यो हि परं प्राणभयं महत्।" त्रासन का आदेश किया है। प्राणभय सब भयों से बढ़ कर है।

अस्थिगतशल्य के चालानार्थ प्रयुक्त होती थी (चित्र ३५)। आज-कल भी अस्थिगत शस्त्रकर्मों में इसका प्रयोग होता है, और इसे Bone Hammer (अस्थिमुद्गर) कहते हैं। मुद्गर के अभाव में अश्म (Stone) से काम लिया जा सकता है।

(१०) पाणितल(हस्ततल-Palm of the hand)-हाथ की हथेली (हस्ततल, करतल) प्रहार करने तथा दबाने के लिये अथवा शस्त्र, मुद्गर, पाषाणादि के प्रयोग के लिये प्रयुक्त होती है।

पादतल (Sole of the foot)- पादतल का प्रयोग अस्थिभग्न आदि में दबाने के लिये किया जाता है।

(११) अंगुलि (Finger)—"हस्तमेव प्रधानतमं यन्त्राणां।"(सुश्रुत) यह हम पहिले पढ़ चुके हैं। वस्तुतः हस्ततल और अगुलियों के बिना यन्त्रों का प्रयोग ही नहीं हो सकता। केवल अंगुलियों वा अंगुष्ट का प्रयोग व्रणशोथ के विम्लापन, पक्वापक्व व्रण की परीक्षा, ज्वर में तापानुमान, रुग्णांग का मार्दव वा काठिन्य भाव, अस्थिभग्नादि में संधि आदि का स्पर्श, मुख का खोलना, नाडीव्रणादि में अंगुली से दबाकर पूयादि का निकालना,भगन्दरार्शःपरीक्षा इत्यादि कार्यों में अनिवार्य है।

(१२) जिह्वा (Tongue)–'रसनार्थो रसः'(चरक)–रस के ज्ञानार्थ रसना (जिह्वा) का प्रयोग किया जाता है, परन्तु मधुमेहादि में पिप्पीलिकादि कीटों की जिह्वा से लाभ उठाना चाहिये। पशु अपनी जिह्वा का प्रयोग व्रणों के शोधनरोपणार्थ करते ही हैं।

(१३) दन्त (Teeth)–हस्तिदन्त का प्रयोग यन्त्र-निर्माण में एवं व्रण के रूढ़ होने पर रोमोत्पादनार्थ किया जाता है। कभी कभी ग्रन्थि खलने वा रज्जु आदि के काटने के लिये भी दांत काम आता है।

(१४) नख (Nail)–नख का प्रयोग त्वग्गत सूक्ष्म शल्यों (कण्टक, छिलतरादि) के निकालने के लिये किया जाता है। कभी कभी स्फोट

(Bleb, छाला) आदि में जब पूय वा जल भरा हो, तो उसे नख के प्रयोग से भेदन कर दिया जाता है, परन्तु नख शुद्ध होने चाहियें। व्रणगत चर्म वा सूक्ष्म सिरादि को उठाने वा पृथक् करने में भी नख का उपयोग होता है।

(१५) मुख (Mouth) मुख का प्रयोग कभी-कभी विष, दुष्ट स्तन्य पूयादि के चूषणार्थ किया जाता है, परन्तु एतदर्थ आज-कल Breast pump, Suction pump आदि का प्रयोग मुख के स्थानापन्न होता है। कई सेवक प्लेग के दिनों में गिल्टी को चूस कर उसका विष निकाल देते हैं। पुनः मुख को प्रक्षालन कर लेना चाहिये। शृंग द्वारा रक्तादि का चूसना भी मुख पर निर्भर है।

(१६) बाल (Hair)—अपरापातन, कण्ठगत शल्य, व्रणसीवन (Suturing), शिरोगत व्रणादि में बालों का प्रयोग किया जाता है। एतद्विषयक शास्त्रों में कई प्रमाण मिलते हैं। आज-कल भी घोड़े के बाल व्रणसीवनार्थ और कण्ठगत निष्कोद्धरणार्थ (Probang and coin catcher) प्रयुक्त होते हैं, तथा मस्सों के काटने के लिये भी घोड़े का बाल बाँध कर उसे शनैः-शनैः कसा जाता है।

(१७) अश्वकटक (घोटककविका चूड़कमिति डल्हणः)--यह घोड़े की लगाम (Bridle) है। अस्थिगत शल्योद्धरणार्थ अश्वकटक को बाणादि शल्य के साथ बाँधकर घोड़े को कशा (चाबुक) मारा जाता था। तब घोड़ा अपने शिरोवेग से शल्य निकाल देता था। (सुश्रुत सूत्र अ० २७)। प्रतीत होता है, कि प्राचीन काल में एतदर्थ घोड़े शिक्षित (Trained) किये जाते थे। आजकल यह कार्य मशीनों द्वारा होता है।

(१८) शाखा (Branch of a tree)—वृक्ष की शाखा का प्रयोग भी अश्वकटकवत् अस्थिगत शल्य निकालने के लिये किया जाता था, यथा "दृढ़ां वा वृक्षशाखामवनम्य तस्याँ पर्ववत् बद्ध्वोद्धरेत॥१९॥ (सु०

सूत्र अ० २७) । यहाँ शाखा वा अश्वशिर स्प्रिंग [Spring] का कार्य करते थे । ध्यान रहे कि शल्य जितना जल्दी झटके से निकलता है, उतना जल्दी शनैः (शिथिल) क्रिया से नहीं निकल सकता । तदनन्तर पीड़ा भी तुरन्त शान्त हो जाती है ।

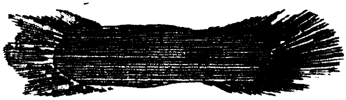
(१६) ष्ठीवन (Spitting)–"श्लेष्मादिनिरसनमिति" डल्हणः– मुख वा कण्ठस्थ शल्य को ष्ठीवन अर्थात् बलपूर्वक थूकने से रोगी बाहर निकाल देता है ।

पिड़िका जब छोटी हो, उस पर प्रातःकाल की थूक (Saliva) लगाने से उसका विम्लापन हो जाता है । यह Auto-vaccine (आत्मविष) वत् कार्य करती है । इस साधारण प्रयोग से रोगी अगले कष्टों से बच जाता है । यह प्रसंगवश कहा गया है ।

(२०) प्रवाहण (Forcing out)—वात, मल, मूत्र, गर्भादि को निकालने के लिये प्रवाहण किया जाता है, अर्थात् जोर लगाया जाता है । अक्षिगत रजः अश्रुस्राव से और नासागत शल्य छींकने से बाहर निकाला जाता है । यह सब वायुप्रेरित प्रवाहण है ।

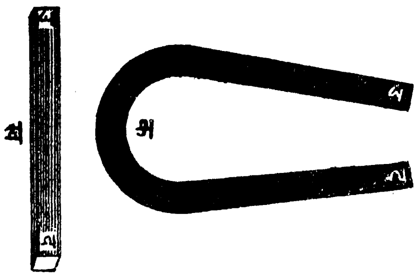
(२१) हर्ष (Joy, Ecstacy) —तुष्टि, प्रसन्नता (खुशी)— यह हृदय वा मनोगत दुःख, जिसे सुश्रुत ने "शोकशल्य" कहा है, को उन्मूलन करने का एकमात्र साधन है । हर्षसूचना, आश्वासन, प्रिय कथादि से रोगी का ध्यान बदल कर वा भावान्तर को प्राप्त होकर दुःख निवृत्त वा न्यून हो जाता है । तद्विपरीत 'भय' (त्रासन) का प्रयोग भी किया जाता है, जैसा कि वाग्भट ने आदेश किया है । एवं कामातुर का वेग क्रोध से और क्रोध का वेग काम से जीता जा सकता है । यह विषय मनोविज्ञान (Psychology) का है ।

(२२) अयस्कान्त—(Lodestone, Magnet)–लोहशल्य की परीक्षार्थ प्राचीन काल में चुम्बक शक्ति का प्रयोग किया जाता था । अब



चित्र ३६ अयस्कान्त
(Lodestone)

भी अक्षिगत लोहकण चुंबक से निकाले जाते हैं। संदिग्ध शल्य स्थान पर अयस्कान्त (चित्र ३६) हिलाने से शल्य भी आकर्षित होकर हिलता है ; अब यह परीक्षा X-Ray द्वारा होती है। अयस्कान्त के ४ भेद डल्हण ने बताये हैं, यथा "अयस्कांतः पाषाणविशेषः, आकर्षकद्रावकचुंबक-भ्रामकभेदाच्चतुर्विधः।" (चुम्बक शक्ति—Magnetism) का विस्तृत वर्णन हमारे "प्रारम्भिक विज्ञान" नामक पुस्तक के पञ्चम प्रकरण में देखो। चुंबक के दो प्रकार चित्र ३७ में दिखाये गये हैं।



चित्र ३७
चुम्बक
क अश्वखुर
Horse-Shoe-Magnet
(ख) दण्ड चुम्बक
Bar Magnet

(२३) क्षार (Alkalis, Caustic)—इनका वर्णन सु० सू० अ० ११ में देखो। क्षारसूत्रों का प्रयोग भगन्दरार्श आदि में किया जाता था। अब भी Caustic touch ऐसे रोगों का प्रसिद्ध उपाय है।

(२४) अग्नि (Cautery)—अर्श, भगन्दर, दुष्टव्रणादि पर अग्नि कर्म बहुधा किया जाता था। उसका विस्तृत वर्णन सु० सू० अ० १२ में देखो। जांबवमुखादि यन्त्रों की व्याख्या में हम पहिले भी बतला चुके हैं। देखो पृष्ठ ४५।

(२५) भेषज (Medicines, Drugs)—सु० सू० अ० ३७ में व्रणपादन, रोपणादि के लिये औषधों का प्रयोग देखो। दारुण वर्ग के

औषध शस्त्रवत् क्रिया करते हैं।

१४. यन्त्रकर्माणि (Functions of the Instruments)

यन्त्रकर्माणि तु —निर्घातन —पूरण —बन्धन —व्यूहन—वतन-चालन— विवर्तन—विवरण —पीडन— मार्गविशोधन—विकर्षण—आहरण—आञ्छन—उन्नमन—विनमन—भञ्जन—उन्मंथन— आचूषण—एषण—दारण—ऋजूकरण—प्रक्षालन—प्रधमन—प्रमार्जनानि चतुर्विंशतिः ॥१७॥ (सु० सू० अ० ७)

इन क्रियाओं की संक्षिप्त व्याख्या नीचे देखो:—

(१) निर्घातन—"इतश्चेतश्च विचाल्य निर्हरणम्" (डल्हणः) अर्थात् इधर-उधर शल्य को हिलाकर निकालना वा 'इतश्चेतश्च घट्टनमित्येके—अर्थात् इधर-उधर हिलाना, पाषाण, मुद्गरादि द्वारा प्रहार करना (Hammering), [२] पूरण—व्रणादि को तैलादि द्रवों से भरना (Filling), [३] बन्धन— व्रणों पर पट्टी बाँधना (Bandaging), [४] व्यूहन—यह पहिले सर्पफणी यन्त्र की व्याख्या में पृष्ठ ३६ पर बताया गया है। [५] वर्तन—घुमाना (Rounding) "विवृत्तस्य वर्तुली करणम्" डल्हणः। [६] चालन—हिलाना (Moving), [७] विवर्तन यन्त्र, हस्तादि से पकड़कर खींचना वा घुमाना, [८] विवरण—व्रणमुख को खोलना वा चौड़ा करना (Dilating), [६] पीड़न—दबाना

---

१. वाग्भटोक्त यन्त्रकर्म—"निर्घातनोन्मथन—पूरण—मार्गशुद्धि—संव्यूहनाहरण—बन्धन—पीड़नानि। आचूषणोन्नमन—नामन-चालभंग व्यावर्त्तनर्जुकरणानि च यन्त्रकर्म ॥४१॥" (अ० हृ० सू० अ० २५)—यह यन्त्रकर्म संख्या में १६ हैं। सुश्रुतोक्त २४ कर्मों में से ६ वाग्भट ने छोड़ दिये हैं। "निर्घातनं ताडनं परिपातनमिति अरुणदत्तः"—निर्घातन का अर्थ अरुणदत्त ने ताड़न वा परिपातन(मुद्गरादि का प्रहार—Hammering) ऐसा किया है। शेष अर्थ ऊपर देखिये।

(Pressing), व्रण को दबाकर पूयादि निकालना, "पीडनं व्रणस्य पूयादि निर्गमनम्" (डल्हणः), [१०] मार्गविशोधन—मूत्रमलादि के मार्गों को शलाका यन्त्र द्वारा खोलना वा चौड़ा करना (Dilating)—देखो पृष्ठ ४६ विकर्षण—"विग्रह्य कर्षणम्" (डल्हणः)—पकड़कर बाहर खींचना, जैसे बाण, कण्टक, गर्भादि को (Extration), [१२] आहरण 'आनयनम्'–निकालना, [१३] आञ्छन—'ईषन्मुखे आनयनम्' (डल्हण), मुख की ओर लाना वा खींचना (Drawing), [१४] उन्नमन—"अधः-स्थितस्य शरःकर्णादेरूर्ध्वं नयनम्" डल्हणः—अधःस्थित शल्य वा हड्डी आदि को ऊपर उठाना (Elevation, uplifting), [१५] विनमन-नीचे करना [Depressing], [१६] भञ्जन—तोड़ना, टुकड़े-टुकड़े करना; जैसे अश्मरी को। [१७] उन्मथन—"प्रनष्टशल्यस्य मार्गे शलाकादिभिरलोडनम्" [डल्हणः], अर्थात् प्रनष्टशल्य को शलाकादि से टटोलना, जैसे अश्मरी को सौंड [sound] से वा टूटी हड्डी को गण्डूपदमुख से। [१८] आचूषण--विष, दुष्ट स्तन्य, रुधिरादि को शृंग वा मुख से चूसना [Suction], [१६] एषण—"गण्डूपदमुखेन गतेरन्वेषणम्"—गण्डूपदमुख शलाका (Probe) से व्रण की गति (मार्गादि) का जांचना [Exploration], जैसे भगन्दर नाडीव्रणादि में, (देखो पृष्ठ ३३), [२०] दारण—"शरःकर्णादि-द्विधाकरणम्" (डल्हणः)—बाणाग्र [Arrow-head] को दो भागों में काट देना [Splitting, cleaving] वा कपोतविट आदि से व्रण को फोडना, [२१] ऋजूकरण—कुटिल शल्य वा अंग को सीधा करना (Straightening), [२२] प्रक्षालन—धोना वा शुद्ध करना, त्रिफलादि क्वाथ द्वारा [Washing or sterilisation], [२३] प्रधमन—"श्लेष्मशल्यसङ्गे नासिकायां नाड्या चूर्णक्षेपणं" (डल्हणः) नासिका में श्लेष्मादि के रोध में नाली [Pipe] द्वारा नस्य चूर्ण को फूंकना [Insufflation], और [२४] प्रमार्जन—"प्रोञ्छनं बाला-ङ्गुलिवस्त्रैरक्षिरजःशल्यादिषु।" [डल्हणः]—पोंछना वा अक्षि में रजः

कण वा व्रणादि से पूयादि को बाल, वस्त्र, कार्पासादि से साफ़ करना (Cleansing or Removing dirt, pus etc.)।

यह क्रियायें अभ्यास से सुविज्ञात हो जाती हैं, जैसा कि सुश्रुत ने कहा है:-

स्वबुद्ध्या चापि विभजेद्यन्त्रकर्माणि बुद्धिमान् ॥ असंख्येयविकल्पत्वाच्छल्यानामिति निश्चयः ॥ १८ ॥ (सु० सूत्र० अ० ७)

बुद्धिमान् वैद्य शल्यों के अनन्त प्रकार होने से यन्त्रों के कर्मों को अपनी बुद्धि से विभक्त करे।

१५. यन्त्रदोषाः ।

(Defects of the Instruments)

तत्र अतिस्थूलं, असारं, अतिदीर्घं, अतिह्रस्वं, अग्राही, विषमग्राही, वक्रं, शिथिलं, अत्युन्नतं, मृदुकीलं, मृदुमुखं, मृदुपाशमिति द्वादश यन्त्रदोषाः ॥ १६ ॥ (सु० सू० अ० ७)

यन्त्रों के १२ दोष यह हैं-[१] अतिस्थूल,-इस से यन्त्र भद्दा [Clumsy] प्रतीत होगा। यन्त्र की मोटाई (thickness) शल्यानुसार होनी चाहिये। [२] असार,—'अशुद्धलोहादिघटितं' (डल्हण)—यन्त्र अच्छे सारवान् (पक्के—Durable) लोह से बनाने चाहियें, अन्यथा वे शीघ्र टूट जावेंगे। असार का दूसरा अर्थ अतिस्थूल की अपेक्षा तनु वा पतला [thin] हो सकता है। [३] अतिदीर्घ,—बहुत लंबा यन्त्र भी ठीक नहीं होता, जैसा कि हम पृष्ठ २० पर कह चुके हैं। [४] अतिह्रस्व—बहुत छोटा। [५] अग्राही,—जो शल्य को पकड़ न सके, तो फिर उस की आवश्यकता ही क्या है? [६]

विषमग्राही—जो विषम अर्थात् शल्य के एक भाग को पकड़े, सम्पूर्ण न पकड़े। [७] वक्र—टेढ़ा (curved), अर्थात् जहां यंत्र ऋजु चाहिए, वहां अनृजु होना अप्रशंसनीय है। [८] शिथिल,-ढीला (Loose) वा 'पीडनात्क्षमं' पकडने के अयोग्य होना (डल्हण), [९] अत्युन्नत, —जिस का कोई भाग (मूल, मुख, कीलादि) बहुत ऊंचा है। [१०] मृदुकील—मृदु वा दुर्बल कील वाला। दबाने वा जोर लगाने पर कील टूट जावेगा और फलक पृथक् हो जावेगा। [११] मृदुमुख—मृदु मुख वाला। यदि मुख दुर्बल हो, तो शल्य को कैसे पकड़ेगा? [१२] मृदुपाश—कोमल पाश वाला। यह दोष प्रायः स्वस्तिक यन्त्रों में होते हैं। परन्तु इन में से कुछ संदंश, शलाका, नाड़ीयन्त्रादि में भी हो सकते हैं, यथा अतिस्थूल, वक्र, असारादि।

एतैर्दोषैर्विनिर्मुक्तं यन्त्रमष्टादशाङ्गुलम्।

प्रशस्तं भिषजां ज्ञेयं तद्धि कर्मसु योजयेत् ॥२०॥ (सु०सू०अ० ७)

इन दोषों से मुक्त (वर्जित) यन्त्र १८ अंङ्गुल लंबे प्रशस्त समझ कर वैद्य को उपयोग में लाने चाहियें॥

१६. दृश्यादृश्यशल्यभेदेन यन्त्रप्रयोगः।

दृश्यं सिंहमुखाद्यैस्तु गूढं कङ्कमुखादिभिः॥

निर्हरेत शनैः शल्यं शस्त्रयुक्तिव्यपेक्षया ॥२१॥ (सु०सू०अ० ७)

जो शल्य दृश्य (Visible) हो, अर्थात् बाहर निकला हुआ हो, उसे शस्त्रों की युक्ति (योजना) को जानने वाला वैद्य सिंहमुखादि यन्त्रों से निकाले और गूढ़ (deep) वा अदृश्य शल्य को कङ्कमुखादि से निकाले।

इस पर हम पूर्व पृष्ठ १२ पर प्रकाश डाल चुके हैं।

प्रश्नसूची [Questions]

१ यन्त्रशस्त्रयोः को भेदः ? सोदाहरणं विशदीकुरु ।

२ यन्त्राणि कतिधा भिद्यन्ते ? तेषां प्रकारभेदेन सँख्यां नामानि कर्म च निरूपयत । यन्त्रनिरुक्तिरपि वाच्या । के च तेषां भागविशेषाः ? किं च तत्कर्म ?

३ किं नाम स्वस्तिकयन्त्रं कतिविधं च तत् ? सिंहमुखकङ्कमुखयोः परस्परभेदपूर्वकं वर्णनं कुरु । तयोराकृतिरपि चित्रणीया ।

४ धमनीग्राहीत्याख्ययन्त्रस्य किं प्रयोजनम् ? तत्स्वरूपमपि प्रदर्शयत ।

५ कति नाडीयन्त्राणि किं च तेषां प्रयोजनम् ?

६ केषाञ्चिच्चतुर्णां शलाकायन्त्राणां स्वरूपं प्रयोगविधिं च विशदयत ।

७ किं खलूपयन्त्रम् ? तत्संख्या नामानि कर्माणि च लेख्यानि । अश्वकटक-ष्ठीवन-हर्ष-मुख-आन्त्र-नख-बालैरित्युपयन्त्रैः शल्योद्धरणे किं प्रयोजनं कथं च साध्यते ? कि नाम शल्यम् ?

८ पूरण - व्यूहन - पीडन-मार्गविशोधन-चूषण-एषण-प्रधमनानां यन्त्रकर्मणां शास्त्ररीत्या व्याख्या कार्या । यस्मिन् कर्मणि येन यन्त्रविशेषेण सहायमुपलभ्यते, तदपि नाममात्रेण लेख्यम् ।

९ यन्त्रदोषाः कति के च ? प्रशस्तयन्त्रलक्षणं ब्रूहि ।

१० अधोलिखितयन्त्राणां प्रकारभेद—प्रमाण—कर्माणि चित्रसहितानि वर्ण्यन्ताम्:----
श्येनमुखं, पित्ताश्मरीतालं, मुचुण्डी, दन्तपातकं, सर्पफणी, गण्डूपदमुखशलाका, संदंशनी, मूत्रमार्गविशोधनी शलाका चेति ।

११ "क्रियासौकर्यार्थं," "शेषाङ्गपरिरक्षायां," "आयसानि च भरिशः," इति शास्त्रवचनत्रयं सम्यग्व्याख्यायताम् ।

द्वितीयोऽध्यायः (शस्त्रप्रकरणम्)

Sharp Instruments

१. शस्त्रगणना।

विंशतिः शस्त्राणि, तद्यथा-मण्डलाग्र[१]-करपत्र[२]-वृद्धिपत्र[३]-नखशस्त्र[४]-मुद्रिका[५]—उत्पलपत्र[६]—अर्धधार[७]—सूची[८]—कुशपत्र[९]—आटीमुख[१०]-शरारीमुख[११]-अन्तर्मुख[१२]-त्रिकूर्चक[१३]-कुठारिका[१४]-व्रीहिमुख[१५]-आरा[१६]-वेतसपत्रक[१७]-वडिश[१८]-दन्तशंकु[१९]-एषण्य[२०] इति ॥ ३ ॥ [सु० सू० अ० ८]

शस्त्र २० हैं, जैसा कि उन के नामों और तदुपरि अंकों से स्पष्ट है। बीस संख्या केवल प्रकारवाचक है। एक २ प्रकार में पुनः कई शस्त्र हो सकते हैं[१]।

१ श्री वाग्भट ने सूत्रस्थान अध्याय २६ में २६ शस्त्रों का वर्णन किया है। इस से आयुर्वेद का Progressive [वृद्धिशील] होना सिद्ध होता है। अभ्यास, अनुभव और आवश्यकता के अनुसार यह संख्या बढ सकती है, जैसाकि आधुनिक शस्त्रसंभार में हम संख्यातीत शस्त्र देखते हैं। "षड्विंशतिः सुकर्मारैर्घटितानि यथाविधि। शस्त्राणि रोमवाहीनि बाहुल्येनाङ्गुलानि षट् ॥ २ ॥ सुरूपाणि सुधाराणि सुग्रहाणि च कारयेत्। अकरालानि सुध्मातसुतीक्ष्णावर्त्तितेऽयसि ॥ ३ ॥ समाहितमुखाग्राणि नीलाम्भोजच्छवीनि च। नामानुगतरूपाणि सदा सन्निहितानि च ॥ ४ ॥ स्वोन्मानार्द्ध-चतुर्थांश-फलान्येकेकशोऽपि च। प्रायो द्वित्राणि युञ्जीत तानि स्थानविशेषतः ॥ ५ ॥" [अ० सू० अ० २६]—शस्त्र २६ हैं, जो यथाविधि अच्छे कारीगरों-

२. शस्त्ररूपाणि ।

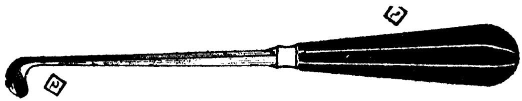
तेषां नामभिरेवाकृतयः प्रायेण व्याख्याता : । ॥ ६ ॥
(सु० सू० अ० ८)

उन की आकृति प्राय: नाम से ही स्पष्ट है ।

वक्तव्य—जैसाकि पूर्व पृष्ठ ११ पर यन्त्रों की नामकरण विधि के सम्बन्ध में लिखा गया है, वही भाव यहां भी हृदयाङ्कित करने चाहियें । ऋषियों ने अपने नाम पर शस्त्रों को प्रसिद्ध न करते हुए ऐसे नाम रखे हैं, जिन से उन की आकृति समझ में आजावे । कुछ नाम लक्षणात्मक (descriptive) हैं, यथा—मण्डलाग्र, 'अर्ध-धारादि । कुछ नाम अङ्गवाचक हैं, अर्थात् जिस अङ्गवा भाग पर वे कार्य करते हैं, उस का नाम साथ जोड दिया जाता है, जैसा कि नखशस्त्र, दन्तशंकु आदि, कुछ वनस्पतियों व पशुपक्षियों के नाम पर प्रसिद्ध हैं, यथा वृद्धिपत्र, कुशपत्र, उत्पलपत्र, आटीमुख, शरारीमुखादि, और कुछ नाम लौकिक (Popular) हैं, जो सब लोग जानते हैं, यथा वडिश, आरा, कुठारिकादि । अधिक स्पष्टीकरणार्थ अब हम नीचे क्रमश: शस्त्रों का वर्णन चित्रसहित करते हैं :—

(Expert Mechanics) से बनाये गये हों, रोम-छेदी और प्राय: ६ अङ्गुल लंबे, अच्छे रूप वाले, तीक्ष्ण धार वाले (Sharp—edged) और सुन्दर दस्तों वाले (with handsome handles) बनवावे । अकराल (भद्दे न हों), उत्तम शस्त्रलोह (Fine steel) से बने हों, जिन का मुखाग्र (फल—blade) अच्छा बना हो, नीलोत्पल जैसे चमकदार (glistering), जिन की नामानुसार आकृति हो, जो सर्वकाल सपीप (तय्यार) रहें । प्रत्येक प्रकार के शस्त्र का जो प्रमाण हो, उस से आधे (½ भाग), चतुर्थांश (¼ भाग) इत्यादि फलों वाले, स्थानानुसार २-३ शस्त्र होने चाहियें । यह यन्त्रों के गुण वाग्भट ने अध्यायारम्भ में ही कह दिये हैं ।

(१) मण्डलाग्र (Sharp Spoon)— मण्डल (वृत्ताकार) मिवाग्रं यस्य तत् मण्डलाग्रम् " (डल्हणः), जिस का अग्रभाग गोल (round or oval) हो, उसे मण्डलाग्र[1] कहते हैं। इस की आकृति चित्र



चित्र ३८ मण्डलाग्र
१ मुष्टि, २ मण्डल

३८ में सुप्रदर्शित है। अंग्रेजी में इसे कर्ता के नाम पर Volkman's Sharp Spoon (वाकमैन का तीक्ष्ण चमचा) कहते हैं। इस का श्रेय तो धन्वन्तरि वा सुश्रुत को मिलना चाहिये था, जिन्हों ने वाकमैन से सहस्रों वर्ष पूर्व इस का आविष्कार किया था। इस शस्त्र को अंग्रेजी में Scraper (खुरचने वाला) भी कहा जाता है। यह क्रियात्मक नाम है। हड्डी को खुरचने के कारण इसे Bone Scoop or Bone-scraper भी कहा जाता है। मण्डलाग्रका कार्य सुश्रुत ने 'छेदने लेखने च' ऐसा लिखा है, अर्थात् काटना और खुरचना (Scarifying) मांसांकुरों को काटना और हड्डी को खुरचना। अंग्रेजी में इसे Curette भी कह देते हैं, जैसे Uterine Curette [गर्भाशय-

१. "मण्डलाग्रं फले तेषां तर्जन्यन्तर्नखाकृति। छेदने लेखने योज्यं पोथकीशुण्डिकादिषु ॥ ६ ॥" — [अ० हृ० सू० अ० २६] मण्डलाग्र के फल की आकृति तर्जनी (Index finger) के नख के आभ्यन्तरिक भाग के सदृश होनी चाहिये और प्रयोग पोथकी (कुकरे—granular lids), शुण्डी (गलशुण्डी,काक—uvula) आदि को काटने व छीलने में होता है।

पृष्ठ ४७ पर प्रदर्शित चित्र में Nasal curette भी एक प्रकार का मण्डलाग्र है।

मुख को खुरचने वाला]। इस की लंबाई सुश्रुत ने ६ अंगुल [४"] लिखी है, जो स्थानानुसार बढ़ाई भी जा सकती है।

मण्डलाग्र (Sharp Spoon) के विषय में यह बातें स्मरणीय हैं :—

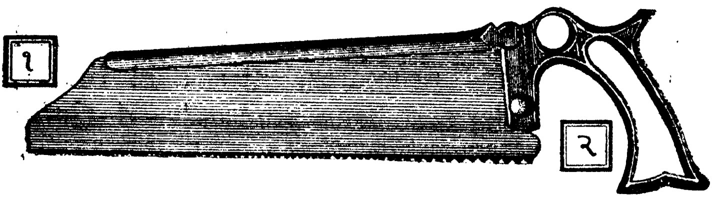
"The edges of the spoon are sharp for the purpose of curetting. The spoon may be round or oval and is mounted on a long handle.

Uses :—To scrape (i) chronic ulcers with hard or thickened edges and the base fixed to underlying structures, (ii) anal fistula, (iii) tubercular and bone sinuses."—*A Guide to Surgical Instruments.*

चमचे के किनारे काटने वा खुरचने के कारण तीक्ष्ण होने चाहियें। चमचा गोल वा वृत्तायत [अंडाकार] और एक लंबे दस्ते पर लगा हुआ होना चाहिये।

प्रयोग—[क] दुष्ट व्रण, जिस के किनारे कठोर और मोटे हों तथा नीचे की रचनाओं से जुड़े हुए हों। [ख] भगन्दर। [ग] क्षयात्मक और अस्थिगत नाडीव्रण को खुरचना [लेखन कर्म]। कुछ डाक्टर इसे Round—head knife or circular knife (मण्डलाग्र वा गोल चाकू) भी कहते हैं। सुश्रुत ने मण्डलाग्र को पकड़ने वा ग्रहण करने के सम्बन्ध में लिखा है, 'मण्डलाग्रं किंचिदुत्तानेन पाणिना लेखने बहुशोऽवचार्यं।" मण्डलाग्र को कुछ उत्तान (उठे हुए) हस्त से पकड़ कर लेखनकर्म में बहुविध प्रयोग करो। एवं प्राचीन वा अर्वाचीन प्रयोग में कोई भेद नहीं।

(२) करपत्र (Amputation Saw) — "करवत् पत्रं यस्य तत् करपत्रं, यथा करोऽङ्गुलिभिराचितो भवति, तद्वत् यत् कण्टकैराचितं स्यात्तत् करपत्रमुच्यते" (डल्हण)--जैसे हाथ पर अंगुलियां लगी रहती हैं, उसी प्रकार आरी पर कांटे लगे रहते हैं, इसी कारण आरी को करपत्र कहते हैं। करपत्र (आरी) को अंग्रेजी में सा (Saw) कहते हैं (देखो चित्र ३६)। यह अस्थिच्छेदन (bone—cutting) के काम आता है। करपत्र छोटे बड़े कई प्रकार के



चित्र ३६ करपत्र (Saw)

१ खरधार फल। २ मुष्टि।

---

१. "छेदेऽस्थ्नां करपत्रं तु खरधारं दशाङ्गुलम्। विस्तारे द्व्यङ्गुलं सूक्ष्मदन्तं सुत्सरुबन्धनम्॥ १८॥" (अ० हृ० सू० अ० २६)-अर्थात् करपत्र हड्डियों के काटने में प्रयुक्त होता है। यह खरधार (खुरदरी धारा वाला), १० अंगुल लंबा, २ अंगुल चौड़ा, छोटे दान्तों से युक्त और सुन्दर मुष्टि (handle) से जुड़ा हुआ हो। वाग्भट के यह लक्षण अति सुन्दर हैं।



चित्र नं० ४०
अंगुलिकरपत्र
Finger
Saw

होते हैं। ऊरु, जंघास्थि आदि के लिये बड़े और अंगुलियों के लिये छोटे करपत्र (Finger Saw—चित्र ४०) काम आते हैं। अस्थि काटने के पूर्व त्वचा, मांसपेशी आदि रचनायें हटा कर अस्थि को नग्न कर लेना चाहिये। मांसपेशियों को सर्पफणी (चित्र १७,१८) से हटा कर दूर रखें। अस्थि पर पहिले करपत्र द्वारा एक गहरी सीता (groove) बना लें, पुनः उसे आगे पीछे करके काटें। यदि सीता न बनावेंगे, तो करपत्र फिसल कर (Slipping) अन्य अंगों वा वैद्य अथवा उस के सहायक के किसी अंग को काट देगा। यह नियम ध्यान में रखो:—

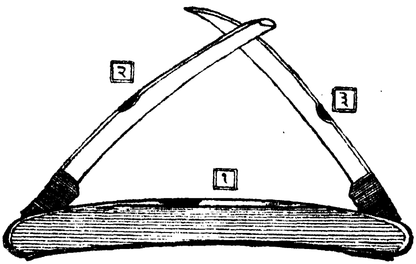
"First make a groove on the bone by drawing the saw firmly twice or thrice towards yourself and then begin to saw with to and fro movements. If one does not make a groove as above, the saw often slips and is likely to injure the surrounding structures and sometimes even the fingers of the surgeon and his assistant."–*A Guide to Surgical Instruments.*

इस का आशय ऊपर दे दिया गया है।

(३) वृद्धिपत्र (Razor, knife or scalpel)– "वृद्धेः पत्रमिव वृद्धिपत्रं तच्च द्विविधं, एकमश्रिताग्रं, द्वितीयं प्रयताग्रं, द्वेऽपि षसाङ्गुलं प्रमाणे। द्वयोरपि 'अर्धपञ्चाङ्गुलं वृन्तं कार्यं सार्धाङ्गुलं फलमिति'—

अनयोर्मध्ये अञ्चिताग्रं वृद्धिपत्रं क्षुरमाहुः ।" (डल्हणः) —अर्थात् अष्ट-वर्गान्तर्गत 'वृद्धि' नामक औषधि के पत्र के समान जिसका फल (Blade) हो, उसको वृद्धिपत्र कहते हैं। यह दो प्रकार का है, (१) अञ्चिताग्र-जिसका अगला सिरा वा नोक भीतर को मुड़ी हो (चित्र४१-३), (२) प्रयताग्र-जिसकी नोक चौड़ी वा आयत हो (चित्र ४१-२ और चित्र ४२)। दोनों ७ अंगुल लम्बे, दोनों का वृन्त (मुष्टि) ५½ अंगुल और फल १½ अंगुल होता है। इन में से अञ्चिताग्र वृद्धिपत्र को क्षुर (Razor, उस्तरा नापितों वाला) कहते हैं। वाग्भटानुसार[१] प्रयताग्र वृद्धिपत्र क्षुर है, जो ठीक प्रतीत होता है। क्षुर चौड़ा भी दो अंगुल होता है।

चित्र ४१ में प्रदर्शित वृद्धिपत्र को आजकल Double Bis-

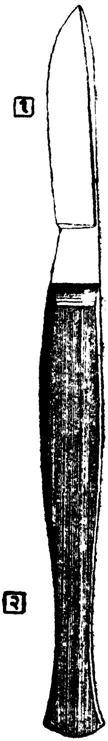


चित्र ४१
वृद्धिपत्रद्वयम्
१ वृन्त
२ प्रयताग्र
३ अञ्चिताग्र

१. "वृद्धिपत्रं क्षुराकारं छेदभेदनपाटने। ऋज्वग्रमुन्नते शोफे गंभीरे च तदन्यथा ॥७॥ नताग्रं पृष्ठतो दीर्घं ह्रस्ववक्त्रं यथाऽऽशयम्।" (अ० हृ० सू० अ० २६)—वृद्धिपत्र क्षुराकार (Razor-like) होता है। छेदन, भेदन और पाटन क्रियाओं में उपयोगी है। इसका अग्रभाग ऋजु (सरल—Straight) होता है और उन्नत (उभरी हुई) शोथ (व्रणादि) में काम आता है। गंभीर शोथ (जो ऊपर त्वचा के समान हो, परन्तु भीतर गहरी हो—Deep abscess) में नताग्र वृद्धिपत्र (Curved-knife), जो पिछली तरफ लंबा और छोटी नोक वाला हो, काम आता है। चित्र ४१ में दोनों प्रकार और ४२ में प्रयताग्र दिखाया गया है। इसे स्केल्पल (Scalpel) भी कहते हैं।

toury (डबल बिस्तुरी) कहते हैं। इसमें प्रयताग्र (२) और अंचिताग्र (३) दोनों आकार दिखाये गये हैं। चित्र ४२ में प्रदर्शित वृद्धिपत्र को Dissecting Scalpel (शवछेदक वृद्धिपत्र) भी कहते हैं। वृद्धिपत्र का अर्थ वृद्ध वा दीर्घ (आयत) फल वाला चाकू-ऐसा भी हो सकता है।

नापित प्रायः क्षुर (उस्तरे) से ही व्रणभेदन (Incision) करते हैं।



वृद्धिपत्र

चित्र ४२

१ फल, २ वृन्त

वृद्धिपत्र—सम्बन्धी निम्न वचन ध्यान में रखें:—

Knives:-of two types. [i] Scalpels—have short broad blades with sharp points, used to make incisions through the soft tissues. [ii] Bistouries have long blades; blades are narrow in proportion to their length; may be straight or curved; sharp or probe-pointed. They are used to open sinuses or fistulae and in performing small amputations, such as of fingers and toes.—*A Guide to S. I.*

(४) नखशस्त्र (Nail-parer)— "नखानां छेदनाय शस्त्रं नखशस्त्रं, तस्य फलं द्व्यङ्गुलायामं, एकाङ्गुलविस्तृतम्।" (डल्हणः)—नखों के काटने के लिये जो शस्त्र व्यवहृतत हो, उसे नखशस्त्र[1] (नहेरना) कहते हैं। उसका फल २ अंगुल लम्बा

---

१. "वक्रर्जुधारं द्विमुखं नखशस्त्रं नवाङ्गुलम्। सूक्ष्मशल्योद्धृतिच्छेद-भेद-प्रच्छन्न—लेखने ॥२०॥" (अ० हृ० सू० अ०२६) नखच्छेदक वक्र-

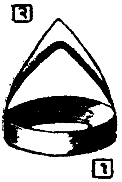
और १ अंगुल चौड़ा होता है, परन्तु यह प्रमाण ठीक नहीं। सुश्रुत ने नखशस्त्र ८ अंगुल लम्बा लिखा है, "तत्र नखशस्त्रैषण्यौ अष्टाङ्गुले।" चौड़ाई प्रायः अर्धाङ्गुल होती है (देखो चित्र ४३)।



चित्र ४३
नखशस्त्र (Nail-parer)

नापित इससे शिरावेधन का कार्य भी लेते हैं। नखशस्त्र का दूसरा सिरा चपटा करवा कर शलाका वा तालयन्त्रवत् कर्णशोधनार्थ उसे प्रयोग करते हैं, देखो पृष्ठ ४२ (५)।

(५) मुद्रिकाशस्त्र (Ring-knife) —चित्र ४४ में प्रदर्शित शस्त्र मुद्रिका में संलग्न होने के कारण मुद्रिकाशस्त्र कहलाता है।



चित्र ४४ मुद्रिकाशस्त्र

भालुकितन्त्र में इसके लक्षण यों लिखे हैं, "मुद्रिकायां निबद्धं स्याद् वृद्धिपत्रं सलक्षणम्। द्व्यङ्गुलं मुद्रिकाशस्त्रं क्षुरसंस्थानमेव च" सुश्रुत ने इसका कार्य छेदन-भेदन लिखा है। वाग्भट ने इसका आशय

और ऋजु धार वाला और द्विमुखी, ६ अंगुल लंबा होता है, और छेदन, भेदन, पच्छने और लेखन कर्म में बरता जाता है। द्विमुख से भाव यह है, कि एक सिरे पर वक्रधार और दूसरे पर ऋजुधार होगा। ग्रहण मध्य में किया जावेगा, अथवा दोनों मुख साथ-साथ हों, एक ऋजु और दूसरा वक्र। चित्र ४३ में एकमुखी वक्रधार नखच्छेदक दिखाया गया है।

अधिक स्पष्ट किया है[१]। गम्भीर स्थानों में जहाँ हाथ न पहुंच सके, केवल अंगुली ही पहुंचे, वहाँ मुद्रिकाशस्त्र से काम लिया जाता है। शत्रु के मारने के लिये यह गुप्त शस्त्र का भी काम देता है।

(६) उत्पलपत्रक (Lancet)—उत्पल कमलपुष्प को कहते हैं, उसके एक दलपत्र [Petal] के समान आकार वाले शस्त्र को उत्पलपत्र कहते हैं (देखो चित्र ४६)। यह नोकीला [Sharp-pointed]



चित्र ४६ उत्पलपत्र

चाकू सा है। इसे अंग्रेजी में Lancet लैन्सेट कहते हैं। कार्य छेदन-भेदन सुश्रुतानुसार जानें। इसके सदृश आजकल Vaccination

---

१. "कुर्यादङ्गुलिशस्त्रकम् ॥१४॥ मुद्रिकानिर्गतमुखं फले त्वर्द्धाङ्गुलायतम्। योगतो वृद्धिपत्रेण मण्डलाग्रेण वा समम् ॥१५॥ तत्प्रदेशिन्यग्रपर्व-प्रमाणार्पणमुद्रिकम्। सूत्रबद्धं गलस्रोतोरोगच्छेदनभेदने ॥१६॥" [अ० हृ० सू० अ० २६]—अंगुलिशस्त्र बनवावे, जिसका मुख मुद्रिका (Finger—ring) से निकला हुआ हो (देखो चित्र ४५)। उसका फल (Blade) अर्धाङ्गुल हो, वृद्धिपत्र वा मण्डलाग्र के समान हो (चित्र ४४ मण्डलाग्र समझो)। प्रदेशिनी अंगुली (Index finger) के अग्रपर्व के समान मुद्रिका हो, जो सूत्र द्वारा मणिबन्ध में बंधी रहे। यह गले तथा अन्य स्रोतों के रोगों में काम आता है। वाग्भट ने मुद्रिका शस्त्र को अंगुलिशस्त्र कहा है। उसे सूत्र से बाँधना आवश्यक है। यदि मुद्रिका ढीली होकर गले में गिर जावे, तो भयानक परिणाम होगा।

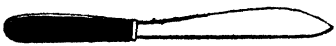


चित्र ४५ अंगुलिशस्त्र

इसका व्यवहार गले तथा मूढ़गर्भ में हो सकता है। चित्र ४५ में प्रदर्शित अंगुलिशस्त्र का एक रूपान्तर ऐसा भी हो सकता है, कि वृद्धिपत्र अंगुलि के साथ सीधा वा समानान्तर (Parallel) हो।

Lancet (चेचक का टीका करने वाला चाकू) और Abscess Lancet (विद्रधि वा व्रणशोथोपयोगी चाकू) बनते हैं।[१]

(७) अर्धधार (Half-edged knife)—"अर्धे धारा यस्य तत् अर्धधारं, चक्रधारमिति प्रसिद्धं। तच्चाष्टांगुलायतं, उरसि अंगुलविस्तारं, द्व्यङ्गुलफलम्, अन्ये तु अध्यर्धधारमिति पठन्ति, अधिकमर्धे धारा यस्य तत् अध्यर्धधारम्॥" डल्हणः—अर्धधार शस्त्र का अर्थ है—आधी धारा वाला, अर्थात् जिसकी केवल आधी धारा तीक्ष्ण हो, शेष अर्धभाग स्थूल हो (देखो चित्र ४७)। इसका कार्य भी छेदन-भेदन है।

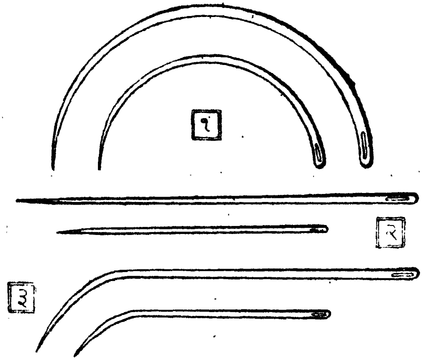


चित्र ४७ अर्धधार शस्त्र

(८) सूची (Suture Needle)—सूची सूई needle को कहते हैं, जिससे व्रण के किनारों को मिलाकर उन्हें सी दिया जाता है। इसके प्रायः ३ प्रकार मिलते हैं (देखो चित्र ४८)। १. धनुर्वक्र—(Curved like a bow), (२) सरल वा ऋजु (Straight), (३) अर्धवक्र(Half-curved)—इनका एक सिरा अति सूक्ष्म तीक्ष्ण और

१. वाग्भट ने इसे अध्यर्धधारवत् कहा है और उत्पलपत्र तथा अध्यर्धधार को एकत्र वर्णन किया है, यथा—"उत्पलाध्यर्द्धधाराख्ये छेदने-भेदने तथा।" (अ० हृ० सू० अ० २६)॥ इस पर अरुणदत्त की टीका देखिये—"उत्पलपत्रं दीर्घमुखमध्यर्द्धधारं तु ह्रस्ववक्त्रमित्यर्थः।"—उत्पल पत्र दीर्घमुख वाला (Long pointed) और अध्यर्द्धधार (Short pointed) होता है।

दूसरा पाशयुक्त होता है। मध्य भाग गोल वा त्रिधारा, आगे पतला, पीछे शनैः-शनैः मोटा होता जाता है, ताकि त्वचा, मांसादि



चित्र ४८
सूच्यः
(Needles)

में गुजरने से पहिले अल्पवेध करे, पुनः अधिक, जिसमें से सूची सुगमता से गुजर सके। इस सम्बन्ध में सु० सू० अ० २५ के निम्न वचन देखिये—"ततो व्रणं समुन्नम्य स्थापयित्वा यथास्थितम्। सीव्येत् सूक्ष्मेण सूत्रेण वल्केनाश्मन्तकस्यवा ॥२०॥ शणजक्षौमसूत्राभ्यां स्नाय्वा बालेन वा पुनः ....॥ देशेऽल्पमांसे सन्धौ च सूची वृत्ताऽङ्गुलद्वयम् ॥ आयता त्र्यंगुला त्र्यस्रा मांसले वापि पूजिता। धनुर्वक्रा हिता मर्मफलकोषोदरोपरि ॥ इत्येतास्त्रिविधाः सूचीस्तीक्ष्णाग्राः सुसमाहिताः ॥२४॥ कारयेन्मालतीपुष्पवृन्ताग्रपरिमण्डलाः ॥ नातिदूरे निकृष्टे वा सूचीं कर्मणि पातयेत् ॥२५॥ दूराद्रुजो व्रणौष्ठस्य सन्निकृष्टेऽवलुंचनम्॥ २६ ॥" (अर्थ सुगम) आयता, त्र्यस्रा, धनुर्वक्रादि शब्दों पर ध्यान दीजिये ॥ अब पश्चिमी मत नीचे दिया जाता है—

Suture needles—Also known as Skin Needles have a bayonet-shaped, tapering point. They are triangular (त्र्यस्रा) on section. As the needle

passes, it cuts through the skin more and more, thus facilitating the introduction of a thicker thread necessary to hold the skin—edges in position. They may be of various sizes, straight or curved. Straight ones are preferable, when suturing structures on the surface, such as, the skin. Curved ones are convenient for suturing in a deep cavity.—*A Guide to Surgical Instruments.*

सूईयां किर्च वा संगीन के समान तीक्ष्णाग्र और तिकोनी होती हैं। जैसे २ सूई त्वचा में से गुजरती है, वैसे २ यह उसे अधिक काटती है, ताकि मोटा तागा सुगमता से त्वचा के किनारों में से गुजर सके। सरल सूईयां त्वग्गत व्रणों को सीने के लिये हैं और वक्र गंभीर स्थानों के लिये।

आजकल एक सूचीग्राहक (Needle-holder) का प्रयोग सूची को पकड़ने के लिये होता है। यह विशेषतः गंभीर स्थानों (वस्ति-गह्वरादि) में काम आता है।

सुश्रुत का उपर्युक्त वर्णन भी अति सारगर्भित है।

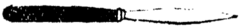
पृष्ठ ५५ पर आंत्र की व्याख्या करते हुए सूत्र वा तागे (Thread or suturing material) का वर्णन किया गया है। उसे पुनः देख लें।

सुश्रुत ने उक्त श्लोकों में शण (सन), क्षौम (अलसी-Lin), बाल, स्नायु आदि का वर्णन किया है। स्नायु को आन्त्र न समझें, प्रत्युत सूक्ष्म मांसतन्तु (Tendon) वा कण्डराभेद जानें। इसे तंतु (तंदी) भी कह सकते हैं।

---

१. अब वाग्भटोक्त सूचीलक्षण देखें :—"वृत्ता गूढदृढा पार्श्वे तिस्रः सूच्योऽत्र सीवने। मांसलानां प्रदेशानां त्र्यस्रा त्र्यङ्गुलमायता।

(९) कुशपत्र (Paget's Knife)—कुश वा दर्भ के पत्र के सदृश नोकीला द्विधार और लंबा फल जिस का हो, उसे कुशपत्र कहते हैं (चित्र ४९ क)। इस का आकार वर्तमान पेजिट् नाईफ (Paget-Knife) चित्र ४९ ख से मिलता है। कार्य विद्रधि (abscess) आदि का विस्रावण करना है। कुशपत्र-संबन्धी डल्हण की



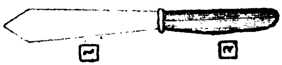
चित्र ४९
क कुशपत्र



चित्र ४९ ख पेजैट-नाईफ (Paget Knife)

व्याख्या—"कुशपत्रतुल्यं कुशपत्रं, तन्मानमाह—'द्व्यङ्गुलं' रुचक विद्यादंगुलं फलमुच्यते। वृन्तं स्यात् त्र्यङ्गुलं मध्ये कुशपत्रस्य लक्षणम्—" इति।

(१०) आटीमुख—"आटी जलवर्धनी नाम पक्षिविशेषः, तन्मुखवन्मुखं यस्य तद् आटीमुखं, तथा चोक्तं,—वृन्तं षडाङ्गुलं विद्यात् तस्याग्रे फलमिष्यते। आटीमुखप्रकारं हि फलमङ्गुष्ठमायतम्" (डल्हणः)—आटी कोई जलपक्षी है। उस की चोंच के सदृश यह शस्त्र है। (देखो चित्र ५०)। इस का कार्य सुश्रुत ने विस्रावण लिखा है। किसी ने



चित्र ५० आटीमुख

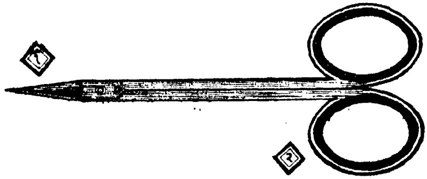
इस को छोटी कैंची के सदृश समझा है, परन्तु डल्हणोक्त आकार से यह कुशपत्रादि की तरह लैनसैट (Lancet) ही प्रतीत होता है, जैसा कि चित्र ४९ में दिखाया है।

अल्पमांसास्थिसन्धिस्थ-व्रणानां द्व्यङ्गुलायता। व्रीहिवक्त्रा धनुर्वक्रा पक्वामाशयमर्मसु ॥२३॥ सा सार्द्धद्व्याङ्गुला" [अ० हृ० सू० अ० २६]

—अर्थ सुगम। सीवन प्रकार वाग्भटने सूत्र० अ० २९ में दिया है। वह भी देख लें। एवं वाग्भट ने कर्णवेधनी सूची का भी वर्णन किया है, यथा—सूची त्रिभागसुषिरा त्र्यङ्गुला कर्णवेधनी ॥२८॥"

(अ० हृ० सू० अ० २६)

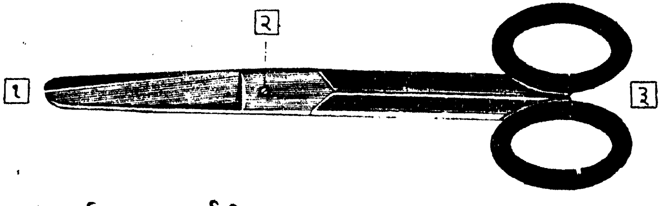
(११) शरारीमुख (Scissors)—इस का प्रसिद्ध नाम कर्तरी (कैंची-फ़ारसी) है (देखो चित्र ५१)—"शरारी दीर्घचञ्चुः



चित्र ५१ शरारीमुख

पक्षिविशेषः स द्विविधः धवलस्कन्धः रक्तस्कन्धश्च, धवलस्कन्धस्य शरारी संज्ञा, तन्मुखवन्मुखं यस्य तच्छरारीमुखं, तस्य शस्त्रस्य लोके कर्तरीति संज्ञा, तां च द्वादशाङ्गुलां चलत्पलाशां कुर्यात् ।' [डल्हणः] यह कैंची की अतिसुन्दर व्याख्या है । चलत्पलाशा का अर्थ है, चलत्पत्रा—अर्थात् जिस के पत्र (फलक-blades) चलते हों (स्वस्तिकयन्त्रवत्) । एवं शरारीमुख को सुश्रुत[1] ने स्वयं आगे चलकर कर्तरी कहा है, यथा—"दशाङ्गुला शरारीमुखी या सा कर्तरीति कथ्यते ।" परन्तु शस्त्रों का कार्य वर्णन करते हुए इसे विस्रावणार्थ लिखा है और कर्तरी का कार्य छेदन है । कर्तरी के विषय में नवीन मत देखिये :—

१. वाग्भट का सुश्रुत से कुछ मतभेद है । उसने शरारीमुख और कर्तरी पृथक् २ माने हैं, यथा—"स्राव्ये शरार्यास्यं त्रिकूर्चके ।।१०।।"



चित्र ५२ कर्त्तरी, १. मुख २. कील ३. वारंगद्वय

"Scissors—of various types, long or medium sized, straight or curved, sharp or probe-pointed. When required, more than one type should be kept ready on the operation table."—*A Guide to S. I.*

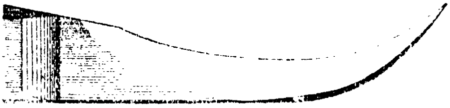
आजकल कर्तरियें छोटी, बड़ी, सीधी वा टेढ़ी, सूक्ष्म वा स्थूलमुखी (Sharp-pointed or blunt) अनेक कार्यार्थ बरती जाती हैं—यथा—Bandage Scissors, Bone—cutting Scissors (अस्थिछेदने), Circumcision Scissors (निरुद्धप्रकशे), Ear Scissors (कर्णे), Nail Scissors (नखछेदने), Umbilical Scissors (नाभिनाडीछेदने), Uterine Scissors (गर्भाशयार्थ), Uvula (काक, गलशुण्डीछेदनार्थ) प्रभृति।

(१२) अन्तर्मुख[१]—"मध्यमुखं, तल्लक्षणमाह—अष्टाङ्गुलं प्रमाणेन जिह्मधारेण चाप्लुतं। शस्त्रमन्तर्मुखं नाम चन्द्रार्धमिव चोद्गतम।"

अर्थात् शरारीमुख और त्रिकूर्चक स्रावणार्थ हैं और "स्नायुसूत्रकचच्छेदे कर्त्तरी कर्त्तरीनिभा ॥१६॥" (अ०सू०अ० २६)—कर्तरी (चित्र ५२) का कार्य स्नायु, सूत्र, वस्त्र, बालादि का काटना है। चित्र ५१ में प्रदर्शित शरारीमुख शस्त्र सुश्रुतोक्त समझें, जो विस्रावण तथा कर्त्तन दोनों कार्य कर सकता है, क्योंकि यह पतला नोकदार है। चित्र ५२ में प्रदर्शित साधारण Dressing Scissors (कैंची) है, जो व्रणक्रिया में सामान्यतः काम आती है। वाग्भटोक्त शरार्यास्य कुशपत्रवत् कोई Lancet (लैंसिट—चाकू) समझना चाहिये।

१. "तद्वदन्तर्मुखं तस्य फलमध्यर्धमङ्गुलम्। अर्धचन्द्राऽऽननं चैतत्तथाऽध्यर्द्धाङ्गुलं फले।" (अ०हृ०सू०अ० २६)—यह लक्षण डल्हणोक्त अन्तर्मुख से मिलते हैं।

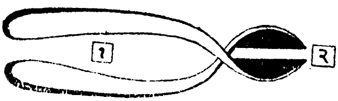
(डल्हण)—यह अर्धचन्द्राकार (Semi-lunar), जिह्मधार (वक्रधार-Curved), ८ अंगुल लंबा अन्तर्मुख (अन्दर को दबा हुआ) शस्त्र



चित्र ५३ अन्तर्मुख शस्त्र

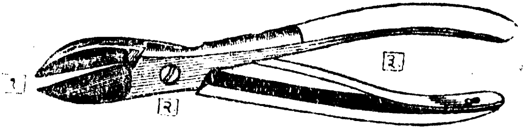
है। यह आजकल Syme's Abscess Knife (साईम महाशय का वृद्धिपत्र चित्र-५३) से मिलता है, और यह गंभीर व्रणों के भेदनार्थ काम आता है।

Surgical Instruments of the Hindus नामक पुस्तक में लेखक महोदय ने इसे कर्तरीसमान दर्शाया है—देखो चित्र ५४



चित्र ५४
अन्तर्मुखभेद

एतत्सदृश आजकल अस्थिछेदक Bone-cutting Forceps मिलता है (चित्र ५५), परन्तु अन्तर्मुख का वास्तविक



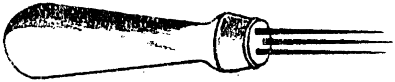
चित्र ५५ अस्थिछेदक (Bone-Cutter)

स्वरूप चित्र ५३ से ही स्पष्ट है।

(१३) त्रिकूर्चक[1]—कूर्च भाषा में कूची (brush, ब्रश) को कहते

---

१. "स्राव्ये..................त्रिकुर्च्चके" — वाग्भट ने त्रिकूर्चक स्रावणार्थ लिखा है। तदतिरिक्त उस ने कूर्च और खज का वर्णन पृथक्

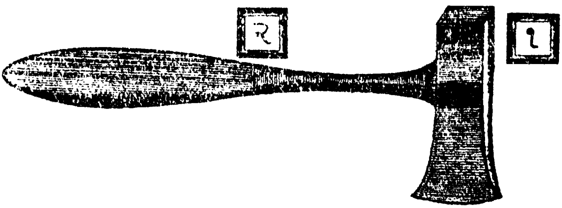


चित्र ५६ त्रिकूर्चक

है। इस का स्वरूप चित्र ५६ से स्पष्ट है। यह विस्रावणार्थ अथवा पच्छने के काम आता है। "त्रयः कूर्चा यस्य तत् त्रिकूर्चकं" (डल्हणः)

किसी महोदय ने इसे Trocar कहा है। यह ठीक नहीं। ट्रोकार व्रीहिमुखयन्त्र है।

(१४) कुठारिका (Axe)—कुठारिका को भाषा में कुल्हारी कहते हैं (चित्र ५७)। कुठारतुल्या कुठारिका, "कुठारिकाया वृन्तं स्यात्



चित्र ५७ कुठारिका

किया है। "सर्ववृत्तास्ताश्चतुरङ्गुलाः। कूर्चो वृत्तैकपीठस्थाः सप्ताऽष्टौ वा सुबन्धनाः। संयोज्यो नीलिका-व्यङ्ग-केश-शातन-कुट्टने ॥२४॥ [अ० हृ० सू० अ० २६]—चार अंगुल लंबी सात वा आठ गोल सूईयां एक गोलाकार पीठ पर अच्छी प्रकार लगी हुई हों, उसे कूर्च वा सूचीकूर्च [अरुणदत्तानुसार] कहते हैं। ऊपर चित्र ५६ में ३ सूईयां दिखाई गई हैं, जिसे सुश्रुत ने त्रिकूर्चक कहा है। यदि इस में ७ वा ८ सूईयां लगा दी जायें, तो यह वाग्भटोक्त कूर्च वा कुर्च्च होगा। यह नीलिका, व्यंग, अर्श आदि में रक्तस्रावणार्थ प्रयुक्त होता—

सार्धसप्ताङ्गुलायतम् । फलमर्धाङ्गुलायामं गोदन्तसदृशं समम् । " (इति डल्हणः)—कुठारिका[1] का वृन्त ७½ अंगुल लंबा और फल अर्धांगुल चौड़ा, सम और गोदन्त के समान होता है। इस का कार्य सुश्रुत ने व्यधन लिखा है। आजकल भी इस प्रकार के Axe-shaped knives (कुठारिकातुल्य चाकू) मिलते हैं।

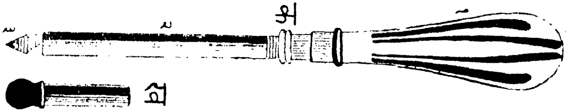
(१५) व्रीहिमुख (Trocar)—"व्रीहिमुखमिव मुखं यस्य तत् व्रीहिमुखं, तत्र भोजः —"शस्त्रं व्रीहिमुखं कार्यमङ्गुलानि षडायतम् । द्व्यङ्गुलं तस्य वृन्तं स्यात्, तत् फलं चतुरङ्गुलं । तन्मुखं व्रीहिविस्तारं तनुसंगूढकण्टकम् ।" (डल्हणः) — व्रीहि एक धान्यभेद है। तत्सदृश जिस शस्त्र का मुख हो, उसे व्रीहिमुखशस्त्र कहा जाता है। भोज

है। खज के लक्षण-"अर्धाङ्गुलैर्मुखैर्वृत्तैरष्टाभिः कण्टकैः खजः । पाणिभ्यां मथ्यमानेन घ्राणात्तेन हरेदसृक् ॥ २५ ॥" [अ० हृ० सू० अ० २६]—यदि अर्धाङ्गुल गोल ८ कण्टक काष्ठदण्ड के एक किनारे पर लगे हों, तो उसे खज [मथाणी] कहते हैं। यह दोनों हाथों से घ्राण में मन्थन कर के रक्त निकालने के काम आता है।

इस के आगे वाग्भट ने कर्णपाली के वेधनार्थ यूथिका का उल्लेख किया है, यथा "व्यधने कर्णपालीनां यूथिका मुकुलानना ॥ २६ ॥" जुही पुष्प के मुकुलवत् मुख होने से इसे यूथिका नाम से पुकारा गया है।

१. "पृथुः कुठारी गोदन्तसदृशार्धाङ्गुलानना । तयोर्ध्वदण्डया विध्येदुपर्यस्थ्नां स्थितां शिराम् ।" ॥ १३ ॥ (अ०हृ०सू०अ०२६) —कुठारी (ऊपर से) मोटी व चपटी, गोदन्तसमान ½ अंगुल चौड़े मुख वाली हो। उसे ऊर्ध्वदण्ड कर के अस्थियों के ऊपर स्थित व संलग्न शिरा को वेधन करे।

ने उसे ६ अंगुल लम्बा (वृन्त २ अंगुल और फल ४ अंगुल), मुख व्रीहि जितना लंबा और चौड़ा, अगला सिरा पतला वा कण्टकसमान तीक्ष्ण होना चाहिये—ऐसा वर्णन किया है। चित्र ५८ में व्रीहिमुख[1]



चित्र ५८ व्रीहिमुख-शस्त्र

शस्त्र, जिसे आजकल अंग्रेजी में ट्रोकार एंड केनुला (Trocar and Canula) कहते हैं, दिखाया गया है। ट्रोकार क तो व्रीहिमुख है, परन्तु उस पर एक नाली (tube) चढ़ी रहती है अर्थात् व्रीहिमुख शस्त्र नाली (२) में 'संगूढ़' रहता है, जैसा कि भोज के पाठ से स्पष्ट है। यह शस्त्र प्रायः जलोदर (Ascites) में उदरस्थ जल निकालने के काम आता है। जलोदरी को आसन (कुरसी)[2] पर बिठा कर (ताकि जल उदर के अधोभाग में एकत्रित हो जावे) व्रीहिमुख शस्त्र को बलपूर्वक नाभि से ४ अंगुल नीचे और थोड़ा सा एक ओर चुभो वा यवमात्र प्रवेश कर दिया जाता है। पुनः उसे निकालकर नाली (Tube, canula) को, जो तनिक त्वचा में दब जाती है, पकड़े रखना चाहिए। इससे भीतर का जल फव्वारे (Fountain) की तरह धारारूप बाहर आने लगता है। आगे बाल्टी वा अन्य पात्र रख कर

१. "व्रीहिवक्त्रं प्रयोज्यं च तच्छिद्रोदरहयोर्व्यधे।" ॥ १२ ॥ (अ० सू० अ० २६)—वाग्भट ने इसे व्रीहिवक्त्र कहा है। एवं अष्टांग-संग्रह में "व्रीहिमुखं अध्यर्धाङ्गुलफलं मांसलप्रदेशशिराव्यधार्थं वृद्ध्युदरगुल्मविद्रध्यादि-व्यधनभेदनार्थं च।" यह पाठ मिलता है।

२. यदि रोगी अशक्त हो, तो शय्या पर बड़ा तकिया देकर बिठाया जाये और अधोभाग पर स्निग्धवस्त्र (मोमजामा) डाल दिया जावे, ताकि अंग और वस्त्र आर्द्र न हों। वेधन से पूर्व मूत्र कराना भी आवश्यक है।

जल उसमें ग्रहण करना चाहिये। जब जलधारा का वेग मन्द हो जावे,[1] तो नाली निकाल कर रोगी को शय्या पर लिटा दो और व्रण पर कोई स्नेह लगाकर उदर को खद्दर वा फलालैन कस कर बाँध दो, ताकि वायु कुक्षि में आध्मान न करे। यह विधि हमारे शास्त्रों में सम्यक्-रूपेण मिलती है[2]। पहिले व्रीहिमुख का प्रयोग करके पुनः नाली लगाई जाती थी, अतः सुश्रुत ने नाली को नाडीयन्त्रों में वर्णन किया है (देखो पृष्ठ २८), परन्तु अब नाली व्रीहिमुख पर चढ़ी रहती है, अतः इसे अंग्रेज़ी में Trocar and Canula (व्रीहिमुख तथा नाली) कहा जाता है। प्रयोग के अनन्तर शस्त्रमुख पर एक पिधान (ढकना वा टोपी-Cap) रक्षार्थ चढ़ा दिया जाता है। यह पिधान ख चित्र ५८ में दिखाया गया है।

यह शस्त्र कुछ परिवर्त्तन के साथ मूत्रवृद्धि[3] [Hydrocele-अण्ड-कोष में जल भर जाना] का जल निकालने के लिये भी काम आता है। प्राचीन काल में इसे शिरावेधनार्थ भी बरता जाता था।

(१६) आरा (Awl)—"आरा चर्मकाराणां शस्त्रम्" [डल्हणः] आरा नाम आर [Shoe-maker's awl] का है, जिसे चर्मकार जूता सीने में बरतते हैं (चित्र ५६)। यह भी वेधनार्थ प्रयुक्त होता है।



चित्र ५६ आरा

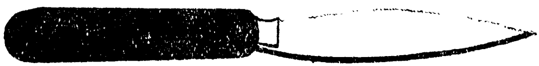
१. यह ध्यान रहे कि जल निःशेष नहीं निकलना चाहिये; जैसा कि वाग्भट ने चिकित्सास्थान अ० १५ में लिखा है, "निधाय तस्मिन्नाडीं च स्रावयेदर्धमम्भसः। अथास्य नाडीमाकृष्य तैलेन लवणेन च व्रणमभ्यज्य बद्ध्वा च वेष्टयेद्वाससोदरम्।" [अ० हृ० चि० अ० १५]

२. देखो सुश्रुत चिकित्सास्थान अ० १४—"उदकोदरिणस्तु .... व्रीहिमुखेन...विध्येत्।"

३. "मूत्रजां स्वेदयित्वा तु वस्त्रपट्टेन वेष्टयेत्। सेवन्याः पार्श्वतोऽधस्ताद्विध्येद् व्रीहिमुखेन तु।" सु० चि० अ० १६।

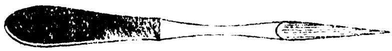
आजकल वेधनार्थ अनेक प्रकार की सुईयां प्रयोग में आती हैं। आरा आमपक्वशोथ के संशय में प्रयोग की जाती है। पक्वावस्था में पूय निकलती है, और आमावस्था में पूयमिश्रित रक्त वा केवल रक्त। इसको Exploring Needle भी कह सकते हैं। आरा को स्थूल कर्णपालि के छेदनार्थ भी बरता जाता था[1]।

(१७) वेतसपत्र - वेतसपत्रवत् सदन्तुर [Serrated] वृद्धिपत्र को वेतसपत्र कहते है [देखो चित्र ६०]।



चित्र ६० वेतसपत्र

कुछ वैद्य इसे सदन्तुर नहीं समझते और लम्बा तीक्ष्णधार चाकू [Narrow–bladed Knife] कहते हैं, जैसाकि चित्र ६१ में दर्शाया गया है।



चित्र ६१ वेतसपत्ररूपान्तर

(१८) वडिश [Sharp Hooks]–"वडिशो दन्तशंकुश्च नताग्रे" [सुश्रुत]—वडिश[2] और दन्तशंकु नताग्र (मुड़ी हुई नोक वाले) होने

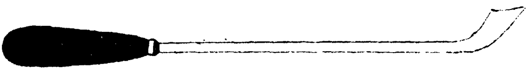
---

१. "आरार्धाङ्गुलवृत्ताऽस्या तत्प्रवेशा तथोर्ध्वतः। चतुरस्रा तथा विध्येच्छोफं पक्वामसंशये ॥२७॥ कर्णपालीञ्च बहुलां........।" [अ० हृ० सू० अ० २६]–यह वाग्भटोक्त आरालक्षण चित्र ५९ में देखो।

२. "वडिशोऽत्यवनतः सूचीतीक्ष्णाग्रो ग्रहणे गलशुण्डिकार्मादेः"—[अष्टाङ्गसंग्रहः]। एवं "ग्रहणे शुण्डिकार्म्मादेर्वडिशं सुनताननम् ॥१७" (अ० हृ० सू० अ० २६)

चाहियें। वडिश हम पीछे पृष्ठ ४० पर दिखा चुके हैं। वहाँ वह स्थूलाग्र है और यहाँ तीक्ष्णाग्र। शेष कोई अन्तर नहीं। किसी तन्त्र में यह पाठ मिलता है—"वडिशे चापि कर्तव्ये प्रमाणेन षडङ्गुले। स्वानतं तु तयोरेकमेकं नात्यानतं भवेत्॥ अर्धपञ्चाङ्गुलं वृन्तं शेषं कार्यं मुखं तयोः। अर्धचन्द्राकृति वक्त्रं कार्यं नात्यानतस्य तु॥ स्वानतं नामयेत् तत्र वडिशं च भिषग्वरः। वृन्ताग्रयोरन्तरं स्याद् यावदर्धाङ्गुलं मतम्। एवं हि क्रियेते एतौ—"। वडिश ६ अंगुल प्रमाण दो प्रकार के होते हैं-[१] स्वानत [सुआनत] और [२] अर्धचन्द्राकार [Half-curved] वा न-अति-आनत। वडिश मत्स्यवेधक कण्टक [मछली पकड़ने वाले काँटे-Fishing hook] को कहते हैं। दोनों आकार चित्र २१ में देखो।

(१६) दन्तशंकु [Tooth Scaler]—यह चित्र ६२ में दिखाया गया है। इसका कार्य दन्तशर्करा [Tartar] का लेखन करना है। भोज-

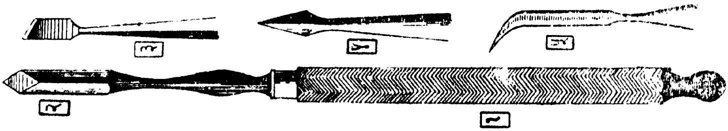


चित्र ६२ दन्तशंकु

तन्त्र में यह पाठ मिलता है, "दन्तशङ्कुर्विजानता। शंकुवच्च मुखं तस्य कार्यमर्धाङ्गुलायतम्॥ चतुरस्रं समं चैव तीक्ष्णधारं समाहितम्॥ वृन्ताग्रं तस्य कर्तव्यं शस्त्रव्रीहिमुखाकृति। कपालिकां शर्करां च दन्तस्थां तेन शोधयेत्" [डल्हणः]—यह अर्द्धांगुल चौड़ा शंकुसमान होता है। इसकी धारा तीक्ष्ण होनी चाहिये। चतुष्कोण और सम। वाग्भट ने इसे दन्तलेखनक[1] कहा है। आधुनिक दन्तविज्ञान [Dentistry] में प्रचलित

१. "एकधारं चतुष्कोणं प्रवृद्धाकृति चैकतः। दन्तलेखनकं तेन शोधयेद्दन्तशर्कराम्॥२१॥" (अ० हृ० सू० अ० २६)—दन्तलेखनक (दांतों को खुर्चने वाला) एक धार (Single-edged), चतुष्कोण, एक ओर बढ़ा हुआ दन्तशर्करा (दांतों का मल) उतारने के काम आता है। इसे अंग्रेजी में Tooth-pike (टूथ—पाईक) भी कहते हैं।

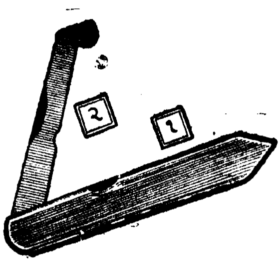
Tooth Scaler [Dental¹ Scaler] नीचे चित्र ६३ में दिखाया गया है:—



चित्र ६३ आधुनिक दन्तशंकु [Modern Tooth Scaler]

इसका हस्तग्रह लंबा होता है, जिसके मुख में दन्तशंकु, जो १२ प्रकार के होते हैं, एक-एक करके लगाये जा सकते हैं। इनमें से ३ शंकु पृथक् २ ऊपर दिखाये गये हैं। यह भिन्न-भिन्न दाँतों के लेखनार्थ उपयोगी हैं।

प्रसगवश हम चित्र ६४ में दन्तमांसशंकु [Gum Lancet]



चित्र ६४ दन्तमांसशंकु (Gum Lancet) १. मुष्टि, २. फल।

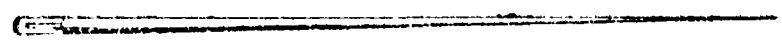
दिखाते हैं, जो मसूढ़ों (दन्तवेष्ट) पर उत्पन्न शोथ वा विद्रधि (दन्तपुप्पुटक, Gum Abscess) से रक्तस्रावार्थ प्रयोग किया जाता है। चित्र ४१ में प्रदर्शित बिस्ट्री में वृद्धिपत्र के साथ इसे भी लगा दिया जाता है—अर्थात् बिस्ट्री में एक ओर अंचिताग्र वृद्धि-पत्र और दूसरी ओर दन्तवेष्टशंकु होता है, उसे Syme's Abscess Knife and Gum Lan-

---

१. Dental हमारे 'दन्त' शब्द से ही बना है। अंग्रेजी के ८०% शब्द संस्कृत से निकले हैं।

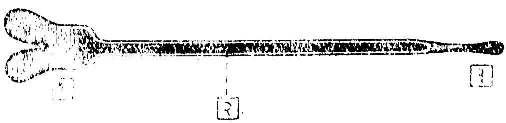
cet कहते हैं। यह वैद्यों को अपने पास अवश्य रखना चाहिये।

(२०) एषणी [Sharp Probe]—"एष्यते अनया इति एषणी" (डल्हण:)—जिससे व्रणमार्ग का अन्वेषण (खोज) किया जावे, उसे एषणी कहते हैं। सुश्रुत ने इसका कार्य एषण और अनुलोमन (एषणी एषणे आनुलोम्ये च) लिखा है। भेदनार्थ भी यह काम आती



चित्र ६५ सूचीमुखी एषणी

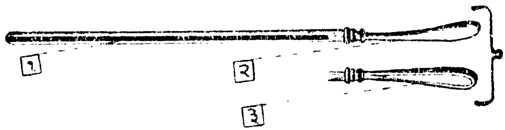
है—यह चित्र ६५ में दिखाई गई है। गण्डूपदमुखी यन्त्र चित्र १६ में देखो। वह अन्वेषणार्थ उपयोगी है। अनुलोमनी एषणी को आज-कल डायरेक्टर (Director-मार्गप्रदर्शक) कहते हैं। इसके दो प्रकार चित्र ६६, ६७ में दिखाए गये हैं। चित्र ६६ में इसका एक सिरा (१) चपटा



चित्र ६६ अनुलोमनी एषणी

(Flat) और तित्तल्याकार (Butterfly-shaped) होता है, दण्ड के मध्य (२) में नाड़ी (Groove) और दूसरा सिरा गण्डूपदाकार (३) है। इसको अंग्रेजी में Director with Tongue Tie and Probe कहते है। चित्र ६७ में इसका एक सिरा नोकदार, मध्य में नाली (Groove) और दूसरा प्रान्त (२) तालसदृश (Scoop-

shaped) है। (३) में Scoop को पृथक् दिखाया गया है। इस एषणी को अंग्रेज़ी में Director with Aural Scoop कहते हैं।



चित्र ६७ सताल एषणी

यह दोनों अनुलोमनार्थ प्रयुक्त होती हैं—अर्थात् नाड़ीव्रण, भगन्दरादि में एषणी को डालकर और वृद्धिपत्र नाली के साथ-साथ चला कर पाटनक्रिया (Incision) करनी चाहिये, यथा—"एषणीं दत्त्वा शस्त्रं पातयेत्।" यदि एषणी व्रण के भीतर न हो, तो अन्यत्र घाव होने का भय है। यह है अनुलोमन (Directing) का अर्थ। चित्र ६६ में प्रदर्शित तित्तली का भाव है एषणी को पकड़ना तथा घुमाना। चित्र ६७ में ताल (Scoop) से लेखन कार्य (Scraping) तथा कर्णशोधन है। आधुनिक शल्यशास्त्र में Hernia Director (अन्त्रवृद्धि एषणी) और Aneurism Needle (सूत्रानुलोमक) का समावेश भी एषणी[1] में हो सकता है।

१. "गतेरन्वेषणे श्लक्ष्णा गण्डूपदमुखैषणी ॥ ६ ॥ भेदनार्थेऽपरा सूचीमुखी मूलनिविष्टखा।" [अ० हृ० सू० अ० २६]—गति (व्रणमार्ग) के अन्वेषण करने (To explore a sinus) के लिये एषणी प्रयुक्त होती है। यह मृदु और गण्डूपदमुखी (आगे से कुछ स्थूल—Blunt probe) होनी चाहिये। इसके अतिरिक्त एक और सूचीमुखी (Sharp Probe) भेदनार्थ प्रयुक्त होती है। उसके मूल में सूचीपाश (Thread-hole) होता है (चित्र ६५)। पाश का प्रयोग पृष्ठ ३४ पर देखें। वस्तुतः गण्डूपदमुखी तो यन्त्रों में गिनी जानी चाहिये (देखो पृष्ठ ३३)। शस्त्रों में सूचीमुखी का समावेश उचित है।

जैसा कि हमने अध्यायारम्भ में निर्देश किया था, कि सुश्रुत ने २० शस्त्रों का वर्णन किया है, तद्विपरीत वाग्भट[१] ने २६ शस्त्रों का।

३. शस्त्राणामष्टविधकर्मणि उपयोगः।

तत्र मण्डलाग्रकरपत्रे स्यातां छेदने लेखने च, वृद्धिपत्र-नखशस्त्र-मुद्रिका-उत्पलपत्रक-अर्धधाराणि छेदने भेदने च, सूची-कुशपत्र-आटीमुख-शरारीमुख-अन्तर्मुख-त्रिकूर्चकानि विस्रावणे, एषणी एषणे आनुलोम्ये च, सूच्यः सीवने, इति अष्टविधे कर्मणि उपयोगः शस्त्राणां व्याख्यातः ॥४॥ (सु० सू० अ० ८)

शस्त्रों की यह प्रयोगविधि हम पीछे शस्त्रों के वर्णन में साथ २ बता चुके हैं।

४. शस्त्राणां ग्रहणविधिः।

तेषामथ यथायोगग्रहणसमासोपायः कर्मसु वक्ष्यते—तत्र वृद्धिपत्रं वृन्तफलसाधारणे भागे गृह्णीयाच्छेदनान्येवं सर्वाणि........ .... शेषाणि तु यथायोगं गृह्णीयात् ॥५॥ (सु० सू० अ० ८)

१. वाग्भट ने अधिक ६ शस्त्र यह कहे हैं:—

(१) ताम्री शलाका (Cataract needle)— यह लिंगनाश (मोतियाबिन्द-Cataract) के वेधनार्थ प्रयुक्त होती थी। "ताम्री शलाका द्विमुखी मुखे कुरुबकाकृतिः। लिंगनाशं तया विध्येत्।" (अ० हृ० सू० अ० २६)। चित्र ६८ में आधुनिक लिंगनाश शलाका दिखाई गई



चित्र ६८ लिंगनाश शलाका

है। जिससे कैटारैक्ट (लिङ्गनाश) में वेधनक्रिया की जाती है। (२)

यह पाठ सुश्रुत में तथा वाग्भट सूत्र० के अ० २६ में श्लोक ३२ से ३४ तक छात्रों को स्वयं देखकर अर्थ-समझ लेना चाहिये। कौनसा यन्त्र वा शस्त्र किस प्रकार पकड़ा जावे, अभ्यास से विदित हो जाता है।

५. शस्त्राणां प्रमाणानि।

"तत्र नखशस्त्रैषण्यौ अष्टाङ्गुले। सूच्यो वक्ष्यन्ते.................. ....शेषाणि तु षडङ्गुलानि ॥ ७॥" (सु० सू० अ० ८)—शस्त्रों का प्रमाण (Size) यथास्थान कहीं २ बता दिया गया है। पाठक इसे भी ग्रन्थ में देख कर समझ लें।

६. प्रशस्तशस्त्रलक्षणानि।

तानि सुग्रहाणि, सुलोहाणि, सुधाराणि, सुरूपाणि, सुसमाहितमुखाग्राणि, अकरालानि, चेति शस्त्रसम्पत् ॥८॥ (सु० सू० अ० ८)

अच्छे शस्त्र वह होते हैं, जिन के ग्रहण स्थान (मुष्टि—Handle) सुन्दर और दृढ़ हों, जो अच्छे लोह (Steel) से बने हों, जिन की धारा तीक्ष्ण हो, जिन का रूप सुन्दर हो, जिन का मुखाग्र (फल-Blade) सुसमाहित (अच्छा बना हुआ) हो, और जो अकराल (अदन्तुर) हों, अर्थात् जिन की धार पर दंदाने न पड़ जावें (करपत्र को छोड़ कर)।

सर्पास्य (Snake lancet)-यह भी एक छोटासा चाकू Lancet है नासार्श और कर्णार्श के छेदन में काम आता है—"सर्पास्यं घ्राणकर्णार्शश्छेदनेऽर्द्धाङ्गुलं फले ॥८॥ (अ० हृ० सू० अ० २६)। (३, ४, ५,) कूर्च, खज और कर्तरी पहिले पृष्ठ ८५, ८६ और ८२ पर वर्णन कर चुके हैं। (६) कर्णवेधन शस्त्र—देखो पृष्ठ ८१ (फुट नोट)। इनमें से विशेष ताम्रो शलाका है, जिसका उल्लेख सु० उत्तरतन्त्र के अ० १७ में लिङ्गनाश की शस्त्रक्रिया में मिलता है।

७. शस्त्रदोषाः ।

तत्र वक्रं, कुण्ठं, खण्डं, खरधारं, अतिस्थूलं, अतितुच्छं, अतिदीर्घं, अतिह्रस्वमित्यष्टौ शस्त्रदोषाः । अतो विपरीतगुणमाददीत, अन्यत्र करपत्रात्; तद्धि खरधारमस्थिच्छेदनार्थम् ॥ ६ ॥ [सु० सू० अ० ८] ।

शस्त्रों के अष्ट दोष[1] यह हैं—(१) वक्र—टेढ़ा (Curved), (२) कुण्ठ—धारा का कुण्ठित (Blunt) होना, (३) खण्ड—टूटा हुआ (Broken), (४) खरधार—धारा का खुरदरा (Rough) होना, (५) अतिस्थूल—बहुत मोटा (Thick, bulky) होना, (६) अति तुच्छ—बहुत छोटा (Tiny) होना, (७) अतिदीर्घ—बहुत लंबा (Too long) होना, और (८) अतिह्रस्व—बहुत छोटा (Too small) होना । इन दोषों से मुक्त शस्त्र ग्रहण करने चाहियें, करपत्र को छोड़कर, क्योंकि वह तो अस्थिछेदनार्थ अवश्यमेव खरधार (Dentated) होना चाहिये ।

८. शस्त्रधारानिर्देशः ।

तत्र धारा[2] भेदनानां मासूरी, लेखनानामर्धमासूरी व्यधनानां
विस्रावणानां च कैशिकी, छेदनानामर्धकैशिकीति ॥१०॥
(सु० सू० अ० ८)

भेदनशस्त्रों यथा वृद्धिपत्र, उत्पलपत्रादि की धारा (Edge) मासूरी अर्थात्-मसूरदल के किनारे के समान, लेखनशस्त्रों, यथा

---

१. वाग्भटोक्तशस्त्रदोषाः — "कुण्ठ-खण्ड तनु-स्थूल-ह्रस्व-दीर्घत्व-वक्रताः । शस्त्राणां खरधारत्वमष्टौ दोषाः प्रकीर्त्तिताः ॥३१॥ (अ० हृ० सू० अ० २६)—अर्थ सुश्रुतवत् । अच्छे शस्त्र के लक्षण वाग्भट ने अध्यायारंभ में कह दिये हैं । "शस्त्राणि रोमवाहीनि........" इत्यादि ।

२. धारा पुनश्छेदनानां मासूरी, लेखनानामर्धमासूरी, व्यधनानाँ विस्रावणानाँ च कैशिकी"—इति अष्टांगसंग्रहः ।

दन्तशंकु, मण्डलाग्रादि की अर्धमासूरी, व्यधनशस्त्रों, यथा वेतसपत्र, व्रीहिमुखादि की, और विस्रावणशस्त्रों, यथा आरा, सूची, त्रिकूर्चकादि की कैशिकी (केशतुल्य पतली) और छेदनशस्त्रों यथा कर्तरी, वृद्धिपत्र, करपत्रादि की अर्धकैशिकी (अर्धकेशतुल्य-half the breadth of the hair) होनी चाहिये।

वडिशो दन्तशङ्कुश्चानताग्रे । तीक्ष्णकण्टक-प्रथमयवपत्रमुखी एषणी, गण्डूपदाकारमुखी च ॥११॥ (सु० सू० अ० ८)

वडिश और दन्तशंकु अग्रभाग में आनत (मुड़े हुए) होते हैं। और एषणी ३ प्रकार की होती है -(१) तीक्ष्णकण्टतुल्य, (२) प्रथम यवपत्र (जौ के पहिले पत्र) के समान तीक्ष्ण और नोकदार और (३) गण्डूपदाकार (केंचवे जैसी)।

६. शस्त्राणां पायना (Tempering)।

तेषां पायना त्रिविधा क्षारोदकतैलेषु । तत्र क्षारपायितं शरशल्यास्थिछेदनेषु, उदकपायितं मांसच्छेदनभेदनपाटनेषु, तैलपायितं सिराव्यधनस्नायुच्छेदनेषु ॥१२॥ (सु० सू० अ० ८)

शस्त्रों की पायना (पान देना) क्षार, उदक और तैल में एवं ३ प्रकार की होती है। क्षारपायित शस्त्र शरशल्य और अस्थियों के छेदन में काम आता है, उदकपायित शस्त्र मांस पेशियों के छेदन, भेदन, और पाटन में और तैलपायित शिरावेधन और स्नायु (तन्त्वादि) के छेदन में व्यवहार होते हैं।

वक्तव्य—पायना (पातुं योजना—डल्हणः) लोह (फौलाद-Steel) को सुतप्त करके जल में बुझाने वा पान देने को कहते है। इससे शस्त्रलोह कठोर हो जाता है। लोहकार इसे सम्यक् जानते हैं। इस क्रिया को विज्ञान में Tempering कहते हैं। जल के अतिरिक्त तैल, द्रवीभूत सीसक (Molten lead) आदि में भी पायना दी जाती है। इन से

शस्त्रलोह उत्तरोत्तर कठोर हो जाता है। यदि शस्त्रों को पान न दी जावे, तो लोह मृदु होने से धारा शीघ्र टूट जावेगी। लोह संबन्धी यह उत्कृष्ट ज्ञान प्राचीन आर्य रखते थे। कुतुब मीनार के समीप लोहस्तम्भ इस बात का साक्षी है। वह ऐसे कठोर लोह से बना है कि उसका काटना कठिन है तथा सहस्रों वर्ष गुजरने पर भी उस पर किट्ट [जंगाल-Rust] नहीं आया। ऐसा कठोर लोह कैसे बना? यह अभी तक आश्चर्यजनक है। क्षारादि की पायना शस्त्रों की विशेष क्रियाओं की सूचक है, जैसा कि ऊपर के पाठ से स्पष्ट है।

१०. शस्त्रधारास्थापनविधिः।

तेषां निशानार्थं श्लक्ष्णशिला माषवर्णा; धारासंस्थापनार्थं शाल्मलीफलकमिति ॥१३॥ (सु० सू० अ० ८)—शस्त्रों को तीक्ष्णधार करने के लिये श्लक्ष्ण (मृदु, साफ, अखर) शिला (पाषाणखण्ड) माषवर्णा (माष के हरित वा कृष्ण वर्णवाली) होनी चाहिये, और धारास्थापनार्थ शाल्मलीफलक (सिंबल की काष्ठपट्टिका) ॥

वक्तव्य—शस्त्रों का सुधारा (तीक्ष्ण और सीधी धारा वाला) होना आवश्यक है। एतदर्थ ३ क्रियायें की जाती हैं, (१) **पायना**—जिसका वर्णन ऊपर हो चुका है, (२) **निशान**—तेज करना (To sharpen the instruments) और (३) **धारास्थापन**—धारा को स्थिर करना। माषवर्ण शिला पत्थरी पर पुनः-पुनः घर्षण करने से शस्त्र की धारा तीक्ष्ण हो जाती है। तत्पश्चात् उसे शाल्मलीफलक पर घिसने से धारा स्थिर हो जाती है। निशानार्थ शिलाखण्ड को अंग्रेजी में Whet Stone कहते हैं और संस्कृत में इसे 'निशानी' कहा जाता है। इसका अपभ्रंश सान (शाण) है, जिस पर शस्त्र, चाकू, कैंची आदि तेज किये जाते हैं। धारास्थापनार्थ काष्ठखण्ड वा पट्टी को अंग्रेजी में Strop कहते हैं। आजकल चर्मकृत स्ट्राप भी मिलता है, जिसे Leather Strop कहते हैं। यह नापितों के पास प्रायः देखा जाता है।

११. शस्त्रकर्मयोग्य-शस्त्रलक्षणम् ।

यदा सुनिशितं शस्त्रं रोमच्छेदि सुसंस्थितम् ॥
सुगृहीतं प्रमाणेन तदा कर्मसु[1] योजयेत् ॥१४॥
(सु० सू० अ० ८)

जब शस्त्र सुनिशित (शाण पर तीक्ष्ण किया हुआ), रोमच्छेदी (रोमवाही) सुसंस्थित (शल्मली-फलक पर सुस्थापित) और सुगृहीत (हाथ में विध्यनुसार पकड़ा हुआ) हो, तब उसे अष्टविध कर्म[1] में प्रमाण से (न अधिक न न्यून) प्रयोग करे ।

१२. शस्त्रनिर्माणविधिः ।

शस्त्राण्येतानि मतिमान् शुद्धशैक्यायसानि तु ॥
कारयेत् करणप्राप्तं कर्मारं कर्मकोविदम् ॥ १६ ॥
(सु० सू० अ० ८)

यह शस्त्र (और यन्त्र भी) मतिमान् (बुद्धिमान् वैद्य) शुद्ध शैक्यायस् (उत्तम तीक्ष्णलोह–Finest Steel) से कर्मार (लोहकार, मिस्तरी, Mechanic) से, जो करणप्राप्त (उपकरणों—Tools of all kinds) से युक्त—(बिना उपकरणों के शस्त्र कैसे बनायगा ?) और कर्मकोविद[2] (अपने कर्म में कोविद–Efficient in Mechanical Engineering) हो, बनवावे ।

---

१. वाग्भटोक्तशस्त्रकर्माणि- "उत्पाट्य-पाट्य-सीव्य-एष्य-लेख्य-प्रच्छन्न–कुट्टनम् । छेद्य भेद्यं व्यधो मन्थो ग्रहो दाहश्च तत्क्रियाः ॥३०॥" किस कर्म में कौनसा शस्त्र प्रयोग किया जावे, स्वयं विचारपूर्वक निश्चय करो ।

२. कर्मकोविदं कर्मपण्डितमिति डल्हणः—'पण्डित' शब्द निपुण विद्वान् के लिये प्राचीन काल में प्रयुक्त होता था ।

वक्तव्य—सुश्रुत के समय में कैसे अच्छे कर्मार (Engineers) हुआ करते थे, जिनके कर्मालय (Workshops) नानाविध उपकरणों और यन्त्रों (Tools and Machines) से युक्त (Equipped) होते थे। वह वैद्यों के निरीक्षण में शस्त्र तैयार करते थे, तथा युद्ध के शस्त्रास्त्र (War Weapons) भी। तब आर्य जाति उन्नत और संसार की शिक्षक थी, इसी कारण मनु महाराज ने आदेश किया था—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥ (मनुः)

अर्थात् समस्त पृथ्वी के सब लोग इस देश (भारतवर्ष) के ब्राह्मणों (विद्वानों) से अपने २ चरित्र (कार्य, व्यवसाय—Professions) सीखें ! अब हमें शिक्षार्थ दूसरे देशों में जाना पड़ता है।

१३. अनुशस्त्राणि (Accessory Instruments)

अनुशस्त्राणि तु त्वक्सारस्फटिककाचकुरुविन्दजलौकाग्नि—
क्षारनखगोजीशेफालिकापत्रकरीरबालाङ्गुलय इति ॥ १५ ॥
(सु० सू० अ० ८)

अनुशस्त्र (हीन शस्त्र, शस्त्रसदृश उपशस्त्र) यह हैं—त्वक्सार (वंश, Bamboo), स्फटिक (Crystal), काच (Glass), कुरुविन्द (कठोर पाषाणविशेष—Corundum वा रत्न-ruby), जलौकायं (जोंक, Leeches), अग्नि, क्षार, नख, गोजी (गोभी वा गाज़बान) और शेफाली (हारसिंहार) के पत्र, करीर (अंकुर वा करील), बाल और अङ्गुलि (संख्या में १३ द्रव्य)।

वक्तव्य—जब शस्त्र न मिले, वा रोगी भीरु हो, तो अनुशस्त्रों का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे शिरावेध के स्थान पर जलौका लग-

बाना सुगम है। 'अशस्त्राण्येव शस्त्रकार्यं कुर्वन्तीत्यनुशस्त्राणि' (इन्दु)-- शस्त्र न होते हुए भी ज शस्त्र का कार्य करें, वह अनुशस्त्र कहलाते हैं। त्वक्सार वंश का नाम है। फटे हुए बांस के किनारे भी छेदन कार्य कर सकते हैं, एवं उनकी तीलियां शलाका का काम देती हैं। अस्थिभग्न पर वंश खंडों को कुशा (Splint) वत् बांधते हैं। काच, स्फटिक, कुरुविन्दादि शस्त्रों के निर्माण में वा तीक्ष्ण करने में प्रयुक्त होते हैं। काच तथा स्फटिक (Pebbles) तो आजकल उपनेत्रों (Spectacles–ऐनकों) के बनाने में काम आते हैं। जलौका, अग्नि और क्षार का वर्णन सुश्रुत के अगले अध्यायों में देखो। नख से भी कभी २ स्फोट, पिडिकादि का भेदन कर दिया जाता है। गोभी अथवा गाज़बान (गौ की जिह्वा के सदृश) और शेफाली के पत्र खर (Rough) होने से लेखन (Scraping) में काम आते हैं, एवं इनके अंकुर गण्डूपदमुख एषणी की तरह काम आते हैं। करीर का अर्थ करील मरुभूमिज सकण्टक पादप भी है। इसके कण्टक एषणी, सूची, वडिशादि वत् भेदन कार्य कर सकते हैं। बाल (अश्ववाल) चर्मकील के काटने में शस्त्रवत् कार्य करता है। अंगुलियों से व्रणादि को दबा कर पूय, रक्तादि निकालते हैं वा चौड़े मुख वाले व्रणों में अंगुली डाल कर एषणक्रिया की जाती है। अश्वत्थपत्रनाल से भी एषण हो सकता है। वस्तुतः बुद्धिमान वैद्य संसार की प्रत्येक वस्तु को चिकित्सा एवं शल्यकर्म में प्रयोग कर सकता है।

१४. अनुशस्त्राणां प्रयोगः ।

शिशूनां शस्त्रभीरूणां शस्त्राभावे च योजयेत् ॥
त्वक्सारादिचतुर्वर्गं छेद्ये भेद्ये च बुद्धिमान् ॥ १६ ॥
आहार्यच्छेद्यभेद्येषु नखं शक्येषु योजयेत् ॥
विधिः प्रवक्ष्यते पश्चात् क्षारवह्निजलौकसाम् ॥ १७ ॥

ये स्युर्मुखगता रोगा नेत्रवर्त्मगताश्च ये ॥
गोजीशेफालिकाशाकपत्रैर्विस्रावयेत्तु तान् ॥ १८ ॥
एष्येष्वेषण्यलाभे तु बालाङ्गुल्यङ्कुरा हिताः ॥

अर्थ—शिशु और शस्त्रभीरु के लिये तथा शस्त्रों के अभाव में अनुशस्त्रों का बुद्धिमान् वैद्य प्रयोग करे। त्वक्सारादि चार वस्तुएं छेद्य भेद्य में बरते। नख, यदि संभव हो, आहरण, छेदन और भेदन में व्यवहार करे। क्षार, अग्नि और जलौका की विधि आगे कहेंगे। मुख और नेत्रवर्त्मगत रोगों (कुकरे आदि) में गोजी, शेफालिकादि के खर पत्रों से विस्रावण करे। यदि एषणी न मिले, तो एष्य रोगों में बाल, अङ्गुली और अंकुरों का प्रयोग करे।

प्रयोगज्ञस्य वैद्यस्य सिद्धिर्भवति नित्यशः।
तस्मात् परिचयं कुर्याच्छस्त्राणां ग्रहणे सदा ॥ १८ ॥
(सु० सू० अ० ८)

प्रयोगज्ञ वैद्य की सिद्धि (सफलता) सदैव होती है। अतः शस्त्रों के पकड़ने वा प्रयोग करने में नित्य परिचय प्राप्त करे।

प्रश्न-सूची (Questions)

१. किं नाम शस्त्रं? कति च तद्भेदाः? केचिद्द्वे शस्त्रे प्रयोगपूर्वकं वर्ण्येताम्।

२. व्रीहिमुखयन्त्रं कथं कुत्र च युज्यते? तस्याकृतिरपि चित्रणीया।

३. एषणी किमर्था? तत्प्रकारान् ब्रूत।

४. सूच्यः कतिविधाः? कथं कुत्र च ता योज्याः?

५. वृद्धिपत्र—नखशस्त्र—करपत्र—शरारीमुख—मुद्रिका—वडिश-दन्तशंकु—कुठारिकेत्येषां शस्त्राणां भाषानामानि भेदान् प्रयोगविधिं स्वरूपं च प्रकटीकुरु।

६. मण्डलाग्रस्य चित्रपूर्वकं प्रयोगप्रकारं निर्दिशत ।

७. त्रिकूर्चक—खज—कुशपत्राणामाकृतिः प्रयोजनं ग्रहणविधिश्च लेख्यः ।

८. अनुशस्त्रस्य कोऽर्थः ? केषांचित्पञ्चानामनुशस्त्राणां नामानि दत्त्वा प्रयोगविधिं विशदयत ।

९. शस्त्रदोषाः के ? शस्त्रसंपदपि वर्णनीया ।

१०. का खलु पायना कतिविधा च सा ? तस्याः प्रयोजनमपि विशदीकुरु ।

११. निशानी का ? धारास्थापनं कथं क्रियते ?

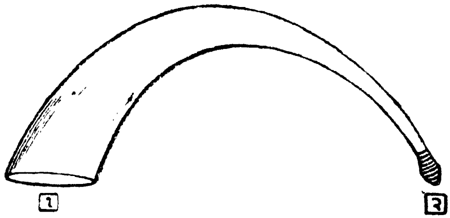
१२. शस्त्राणां कर्माणि कति कानि च ? यस्मिन् कर्मणि यच्छस्त्रं युज्यते, तत् सम्यग् वर्णयत । ग्रहणविधिरपि तत्र तत्र निर्देश्यः ।

तृतीयोऽध्यायः (मिश्रितप्रकरणम्)

Miscellaneous Instruments

जो यन्त्र वा शस्त्र पिछले दो अध्यायों में नहीं दिये जा सके, वह अब इस अध्याय में दिये जाते हैं।

(१) शृंगयन्त्र (Horn)-शृंग (सींग) का प्रयोग दुष्ट वात,



चित्र ६६ शृंग १ मुख २ अग्र

विष, दुष्ट रक्त, दुष्ट स्तन्यादि के चूषणार्थ किया जाता है। चित्र ६६ में इसका आकार दिखाया गया है।

सु० सू० अ० १३ में शृंग का निम्न वर्णन देखें—

"उष्णं समधुरं स्निग्धं गवां शृंगं प्रकीर्तितम्। तस्माद्वातोपसृष्टे तु हितं तदवसेचनम् ॥५॥ —शृंग यहां गौ का होना चाहिये[1]।

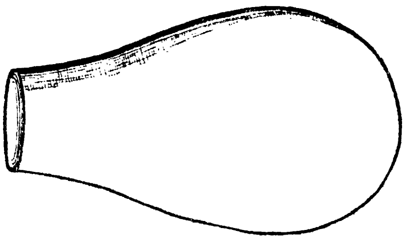
प्रयोग— "तत्र प्रच्छिते तनुवस्तिवस्त्रपटलावनद्धेन शृंगेण शोणितमवसेचयेत् आचूषणात्।" (सुश्रुत)–पच्छ लगाकर और तनुवस्त्र

---

१. "त्र्यङ्गुलास्यं भवेच्छृङ्गं चूषणे अष्टादशाङ्गुलम् । अग्रे सिद्धार्थकच्छिद्रं सुनद्धं चुचकाकृति ॥ २४ ॥" (अ० हृ० सू० २५)—शृंग का मुख ३ अंगुल और लम्बाई १८ अंगुल हो। अगला भाग सर्षप समान छोटा और चुचकाकार (Nipple-shaped) और सुनद्ध (तनुवस्त्रबद्ध) होना चाहिये। "चुचकस्य स्त्रीकुचाग्रस्याकृतिराकारो यस्य तदेवम् ॥" (अरुणदत्तः)।

से शृंग का मुख बांधकर उसका रक्तावसेचनार्थ प्रयोग किया जावे। दुष्टस्तन्यचूषणार्थ पच्छ लगाने की आवश्यकता नहीं। तनुवस्त्र का प्रयोजन शृङ्ग की भीतरी वायु को अपने मुख में खींचना और स्वरक्षार्थ है—अर्थात् दुष्ट रक्तादि मुख में न चला जावे। पच्छ किये बिना रक्त न निकलेगा। स्तन्य तो चुचकछिद्रों से निकल ही आयेगा। शृङ्ग एक द्विमुखी नाडीयन्त्र है (पृष्ठ २८)।

(२) अलाबुयन्त्र—अलाबु तुंबी वा कद्दू (Bottle Gourd) को



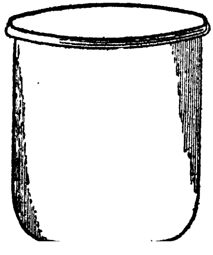
चित्र ७० अलाबु यन्त्र

कहते हैं। सुपक्व फल को शुष्क करके और उसका मुख काटकर अलाबु यन्त्र बनाया जाता है (चित्र ७०)। यह एकमुखी नाडीयन्त्र है। "अलाबु कटुकं रूक्षं तीक्ष्णं च परिकीर्त्तितम् ॥ तस्मात् श्लेष्मोपसृष्टे तु हितं तदवसेचने ॥ ७ ॥" (सु० सू० अ० १३)। अलाबु कटु, रूक्ष और तीक्ष्ण होने से श्लेष्मदुष्ट रक्त के अवसेचनार्थ काम आता है।

प्रयोग—"प्रच्छिते शोणितमवसेचयेत् सान्तर्दीपयाऽलाब्वा ॥८॥ (सु० सू० अ० १३)। अलाबु भी पच्छ लगाकर प्रयोग किया जाता है, परन्तु उसमें कर्पूर, स्पिरिट, तृणादि जला कर वायु को पहिले निकाल

देना चाहिये। रिक्त स्थान (Vacuum) की उत्पत्ति से दुष्ट शोणित तुम्बी[1] में भर जाता है।

(३) काच शराव (Cupping Glass)—यह अलाबु का



चित्र ७१ काच शराव

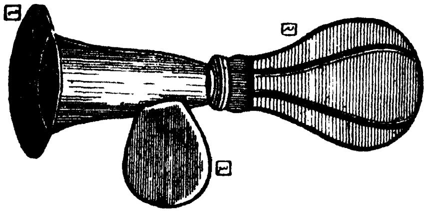
आधुनिक रूपान्तर है। इस में थोड़ा सा मद्यसार (Spirit) पार्श्वों पर लगाकर उसे प्रदीप्त किया जाता है। ज्वलन मन्द होने पर उसे प्रच्छित स्थान पर लगा देते हैं। अग्नि तत्काल बुझ जाती है और रक्त निकल आता है। इसे आजकल प्रायः शूलशमनार्थ मांसल स्थानों पर

---

१. "स्याद्द्वादशाङ्गुलोऽलाबुर्नाहे त्वष्टादशाङ्गुलः। चतुस्त्र्यङ्गुलवृत्तास्यो दीप्तोऽन्तः श्लेष्मरक्तहृत् ॥२५॥" (अ० हृ० सू० अ० २५) अलाबु यन्त्र १२ अंगुल लंबा, नाह (परिणाह—Circumference) में १८ अंगुल, मुख ३-४ अंगुल चौड़ा और गोल हो, उसे अन्तर्दीप्त करके श्लेष्मदुष्ट रक्त को निकाले। "अन्तर्मध्ये दीप्तो ज्वलितः पिचुभूर्जादिगर्भ इत्यर्थः।" (अरुणदत्तः)-अलाबु के भीतर पिचु (कार्पास खण्ड), भूर्जपत्रादि डाल कर जलाया जावे। पिचु को मद्यसार (Spirit) से आर्द्र कर के भी जला सकते हैं। वाग्भट ने प्रसंगवश घटीयन्त्र का भी उल्लेख किया है, "तद्वद् घटी हिता गुल्म-विलयोन्नमने च सा ॥२६॥" घटी (छोटी घड़ी) को अलाबुवत् गुल्म के लीन करने अथवा उन्नमन करने में प्रयोग किया जा सकता है। मैंने सिन्ध में स्त्रियों को वातगुल्म में घटी का प्रयोग करते देखा है।

लगाते हैं। कपिंग ग्लास ३ प्रमाणों (अल्प, मध्यम और वृहत्) में मिलते हैं। चित्र ७१ में वृहत्प्रमाण दिखाया गया है।

(४) स्तन्यचूषक यन्त्र(Breast Pump)— दुष्टस्तन्यचूषणार्थं आधुनिक यन्त्र, जिसे ब्रैस्ट पम्प कहते हैं, चित्र ७२ में देखें।



चित्र ७२ स्तन्यचूषक (Breast Pump)

इसके तीन भाग हैं, (१) काच शराव, जो चुचक वा स्तनाग्र पर लगाया जाता है। (२) रब्बर कोष (Rubber bulb), जिसे दबाने से वायु बाहर निकल जाता है। और (३) ग्राहक कोष्ठ (Receiver), जिसमें स्तन्य चुचक के छिद्रों में से निकल कर एकत्र होता है। ब्रैस्ट पंप २ औंस और ४ औंस दो प्रकार के मिलते हैं।

अलाबु, घटी, काच शराव और स्तन्यचूषक—यह सब एकमुखी नाड़ीयन्त्र हैं (देखो पृष्ठ २८) और शृंग द्विमुखी। इन सब का सिद्धांत एक ही है, अर्थात् वायु निकाल कर रक्तादि का अवसेचन करना।

(५) अर्शोयन्त्र (Rectal Speculum)—यह चित्र ७३ में दिखाया गया है। इस का प्रयोग अर्श (Piles) और भगन्दर (Fis-



चित्र ७३ अर्शोयन्त्र

tula) की परीक्षा करना तथा क्षारादि का अर्श पर पातन करना है। इसके अतिरिक्त इससे गुदा में व्रण, विद्रधि, शोथादि की परीक्षा भी हो सकती है, इसी कारण इस यन्त्र को आजकल रैक्टल स्पैक्युलम (गुद-दर्शक) कहते हैं। इसका एक सिरा (१) खुला होता है, जिसके बाहर कर्णिका होती है, जो यन्त्र को सम्पूर्ण गुदा में जाने से रोकती है। दूसरा सिरा (२) बन्द (Blind) है, जिनके समीप पार्श्व में एक लंबा वा गोल छिद्र होता है। अर्शोयन्त्र के प्रयोग से पूर्व रोगी को वस्ति देकर कोष्ठ शुद्ध कर लेना चाहिये (यदि कोई शस्त्र कर्म करना हो) और तैलादि किसी स्नेह से यन्त्र को स्निग्ध करके शनैः २ गुदा में प्रवेश किया जावे। उसे घुमाने से जब गुदकील (मस्सा वा मस्से) छिद्र में फंस जावे, तो फिर उस पर क्षार वा अग्नि का प्रयोग सुगमता से हो सकता है। सु० चि० अ० ६ में इसका वर्णन "अत ऊर्ध्वं यन्त्र-प्रमाणमुपदेक्ष्यामः। तत्र यन्त्रं लौहं दान्तं शार्ङ्गं वार्क्षं वा गोस्तनाकारम्" इत्यादि पाठ से मिलता है। उसे देखकर समझ लें। यह भी द्विच्छिद्र नाडीयन्त्र है। स्त्रीपुरुषों के लिये पृथक् २ प्रमाण का होता है, और लोह, हस्तिदन्त, शृंग वा काष्ठ से बनाया जाता है।[1]

(६) योनिव्रणेक्षण यन्त्र (Vaginal Speculum)—यह अभूतपूर्व नाडीयन्त्र वाग्भट ने ही सर्वप्रथम रचा और वर्णन किया—यथा

---

१. सुश्रुत के सदृश ही वाग्भट का पाठ है, यथा—"अर्शसां गोस्तनाकारं यन्त्रकं चतुरङ्गुलम्–इत्यादि—(अ०हृ०सू०अ० २५)। इस के साथ ही वाग्भट ने शम्याख्य यन्त्र का उल्लेख किया है, यथा "शम्याख्यं तादृगाच्छिद्रं यन्त्रमर्शःप्रपीडनम् ॥"—शमीयन्त्र अर्शोयन्त्रवत्, परन्तु अच्छिद्र (छिद्ररहित) जानें, जिसका प्रयोजन मस्सों को पीड़न (Press) करना है। भगन्दर यन्त्र अर्शोयन्त्र से कुछ भिन्न होता है, यथा "सर्वथापनयेदोष्ठं छिद्रादूर्ध्वं भगन्दरे ॥१८॥" (वा०सू०)—अर्थात् भगन्दरयन्त्र में छिद्र से ऊपर का ओष्ठ (कर्णिका) हटा देना चाहिये।

"योनिव्रणेक्षणं मध्ये सुषिरं षोडशाङ्गुलं । मुद्राबद्धं चतुर्भित्तमम्भोजमुकुलाननम् । चतुःशलाकमाक्रान्तं मूले तद्विकसेन्मुखे ॥३१॥" (अ०हृ०-सू० अ० २५)—योनिव्रणेक्षणयन्त्र मध्य में रिक्त वा पोला, १६ अंगुल लंबा, मुद्रा (चक्र-Ring) से बन्धा हुआ, चतुर्भित्त अर्थात् ४ भित्तियों (पत्रों) वाला—Four bladed, अंभोज (कमल) के मुकुल समान मुख वाला—अर्थात् जिस प्रकार कमल पुष्प के दलपत्र (Petals) नीचे से जुड़े हुए और ऊपर खुले हुए होते हैं, इसी प्रकार इस यन्त्र के फलक (Blades) भी एक ओर मुद्राबद्ध और दूसरी ओर खुले हुए होते हैं, इसके मूल में ४ शलाकायें होती हैं, जिनका सम्बन्ध भित्तियों (Blades) से होता है। उन्हें दबाने से यन्त्र का मुख खुल जाता है। कितना सुन्दर वर्णन है ? आजकल यन्त्रमूल में पेच (Screws) लगे रहते हैं, जिनसे फलक खुल वा बन्द हो सकते हैं।

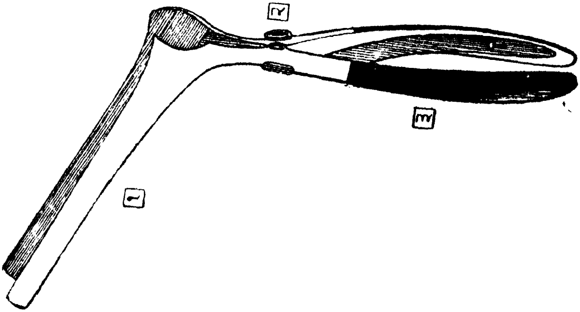
इस यन्त्र का बृहद् चित्र पुस्तक के आरम्भ में दिखाया गया है। वहां से इसकी आकृति समझ में आ जावेगी। इसे आजकल योनिवीक्षण यन्त्र (वैजाईनल स्पैक्युलम्—Vaginal Speculum) कहते हैं। इसका आनन (मुख-अग्र) योनि (Vagina) में डालकर मुद्रा के साथ लगे हुए हस्तग्रह को, जिसे वाग्भट ने चतुःशलाका मूल कहा है और आजकल इसे Folding handle कहते हैं, दबाने से योनि-मुख चौड़ा होकर भीतरी रचना गर्भाशय मुख (Os[1]) तथा ग्रीवा (Cervix) आदि दीख पड़ते हैं। यह है इस यन्त्र का संक्षिप्त आशय। क्या पश्चिमी डाक्टर हमें बता सकते हैं कि उनका कोई ग्रन्थ, जो १५०० वर्ष पुराना हो, उसमें योनिवीक्षण यन्त्र का वर्णन मिले, एवं आन्त्र का (देखो पृष्ठ ५५) ? अष्टांगहृदय १५०० वर्ष पुराना ग्रन्थ है।

आधुनिक शल्यशास्त्र में स्त्रीरोगों के निदान तथा शस्त्रकर्म के लिये अनेक यन्त्रशस्त्र मिलते हैं, उनमें से बहुत से Labour Instruments (प्रसवयन्त्र) हैं। एतदर्थ पटियाला निवासी श्री पं० कान्ति

१. Os शब्द संस्कृत 'आस्य' से ही निकला है।

नारायण की पुस्तक 'प्रसवविज्ञान' (सचित्र) देखें । वैद्याओं के लिये यह बहुत उपयोगी ग्रन्थ है ।

(७) नासावीक्षण यन्त्र (Nasal Speculum)—चित्र ७४



चित्र ७४ नासादर्शक

(Nasal Speculum)

में नासादर्शनार्थ नवीन यन्त्र दिखाया गया है । इसका अग्रभाग (१) नासा में डालकर हस्तग्रह (३) को दबाने से घ्राण चौड़ा हो जाता है । पेच (२)की क्रिया द्वारा फलक स्थिर रूप से खुले रहते हैं । इस यन्त्र के प्रयोग से नासा की आभ्यन्तरिक रचना दृष्टिगोचर हो जाती है। "Nasal Speculum is used to widen the anterior nares by retracting the lateral and septal walls to examine the interior of the nose."—इसका आशय ऊपर दे दिया गया है । यह रोगदर्शनार्थ नाडीयन्त्रों में सम्मिलित हो सकता है ।

(८) जिह्वा-पीडक (Tongue Depressor)—चित्र ७५ में प्रदर्शित पट्टिका जिह्वा को दबाकर कण्ठ को देखने के लिये प्रयुक्त



चित्र ७५ जिह्वापीड़क

होती है। यह न हो, तो चमचे से भी काम लिया जा सकता है। इसे तालयन्त्रों में गिन सकते हैं (पृष्ठ २४, २५)।

(९) कर्णदर्शक (Ear Speculum)—चित्र ७४ से मिलती-जुलती रचना का नाम कर्णदर्शक है। अथवा यह एक नाली सी है, जो आगे तंग और पीछे चौड़ी होती है। इसके साथ कभी २ विद्युत्-कोष (Battery or Cell) लगी रहती है। उसके प्रकाश से कर्ण की आभ्यन्तर रचना कर्णपटह (Ear drum) आदि सब कुछ दीख पड़ता है। इसे विद्युत्कर्णदर्शक (Electric Auriscope) भी कहते हैं। विद्युत् के अभाव में सूर्यप्रकाश से भी काम ले सकते हैं।

(१०) कण्ठशल्यावलोकनी नाड़ीयन्त्र—"दशांगुलार्द्धनाहान्तः-कण्ठशल्यावलोकने।"—एवं वाग्भट ने अनेक नाडीयन्त्र 'आमयानां च दर्शने' वर्णन किये हैं। वहां पाठ देखकर समझ लें। उसने लिखा है,

"नाड़ीरेवंविधाश्चान्या द्रष्टुं शल्यानि कारयेत्" ॥१४॥

इस प्रकार के अनेक नाडीयन्त्र शल्यों को देखने के लिए बनवाने चाहियें।

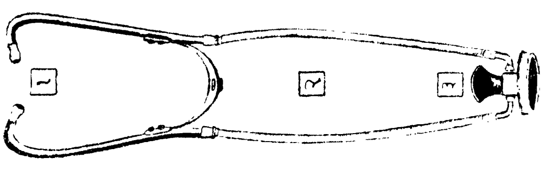
(११) धूमनेत्र (Inhaler)—सु० चि० अ० ४० में इसका



चित्र ७६ धूमनेत्र (Inhaler)

वर्णन मिलता हैं, यथा—"धूमनेत्रं तु कनिष्ठिकापरिणाहमग्रे कलाय-मात्रस्रोतो मूलेऽङ्गुष्ठपरिणाहमित्यादि"। चित्र ७६ में प्रदर्शित यन्त्र इसका रूपान्तर है। अग्रभाग (१) में धूम्रद्रव्य कुष्ठ, वचादि का चूर्ण रखकर उसे तमाकू की तरह जला लेते हैं और मुख (२) से धूम्र भीतर को खेंचते वा Inhale करते हैं। इसका प्रयोग तमक श्वास, श्लेष्म-कासादि में कराया जाता है। शार्ङ्गधर ने भी धूमनाडी का वर्णन उत्तरखंड अ० ९ में किया है, "धूमनाडी भवेत् तत्र त्रिखण्डा च त्रिपर्विका।" इत्यादि। एवं वाग्भट ने भी "वस्तिनेत्रसमं द्रव्यं त्रिकोशं कारयेदृजु। मूलाग्रेऽङ्गुष्ठकोलास्थिप्रवेशं धूमनेत्रकम् ॥८॥" (अ०हृ० सू० अ० २१)—धूमनेत्रक का उल्लेख किया है। यह त्रिकोश और सीधा होता है। इसके अगले सिरे में धूम्रवर्त्ति दी जाती है, यथा "धूमनेत्रार्पितां पातुमग्निप्लुष्टां प्रयोजयेत्"। (अ० सू० अ० २२)। धूमनेत्र का मुख चौड़ा और मूल छोटा होना चाहिए। आजकल का 'हुक्का' भी धूमयन्त्र है और सीग्रैट को धूमवर्ति समझना चाहिए।

(१२) उरोवीक्षण यन्त्र (Stethoscope)—यह सुप्रसिद्ध त्रिमुखी नाडीयन्त्र हृदय और फुफ्फुस की परीक्षार्थ प्रयुक्त होता है (चित्र ७७)।



चित्र ७७ उरोवीक्षणयन्त्र

इसके तीन भाग हैं, (१) दो कर्णखंड (Ear-piece), (२) दो रबर की नालियां (Rubber-tubes) शब्दवाहनार्थ और (३) वक्षोभाग (Chest-piece)। हृदयपरीक्षार्थ कानों में कर्णखण्ड सुयोजित करके वक्षोभाग

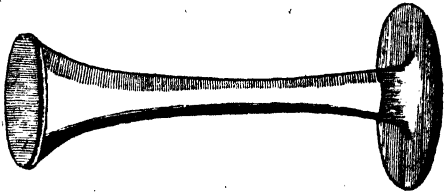
(३) को चुचुक से १½ इञ्च छाती के मध्य अर्थात् वक्षोऽस्थि की ओर, परन्तु कुछ नीचे लगा कर शब्द सुनो। वक्षोभाग छाती से ठीक लगा रहे। उसके और छाती के बीच में वायु (वा अन्तर) न रहे। कानों में भी कर्ण-खण्ड ठीक लगें। हृदयविस्तृति (Dilation of the heart) में हृदय का निचला भाग (Ventricle) अधिक नीचे वा पार्श्व की ओर हो जाता है। वक्षोभाग को इतस्ततः करके जहां 'लुप-डुप' का शब्द ठीक सुनाई दे, वही हृदय के क्षेपक कोष्ठ (Ventricle) का निश्चित स्थान समझना चाहिए। इस यन्त्र से हृदय का बलाबल तथा गति का ज्ञान होता है। ज्वर की आम वा प्रारम्भिक अवस्था में हृदय बलवान् और जीर्णावस्था में क्षीण प्रतीत होता है। श्रम की अवस्था में हृदयगति तीव्र होती है और विश्राम में मन्द। हृद्द्राव (Palpitation) में शब्द प्राय: समस्त छाती पर सुनाई देता है, और कम्पन अधिक होता है। इसे (Murmur) भी कहते हैं। हृदयकपाट Valve के शिथिल होने वा फट जाने से रक्त पुनः क्षेपक कोष्ठ में लौट आता है। इसमें रक्त 'गड़ गड़' शब्द से लौटता हुआ सुनाई देता है। इस अवस्था को (Regurgitation of the heart) कहते हैं। क्षीण अथवा मृतप्राय अवस्था में हृदय अति दुर्बल शब्द (Feeble Sounds) देता है और कभी २ रुकता हुआ (Failing heart) सुनाई देता है। सम्पूर्ण हृदयावरोध (Heart failure) की अवस्था में शब्द बन्द हो जाता है। यह मृत्यु[१] है।

१. क्या मृत्यु हृदयावरोध से होती है अथवा आयु-समाप्ति पर हृदय का बन्द होना अनिवार्य है? यह विषय विचारणीय है। पहिला मत नास्तिकों का है, जो जीवात्मा को नहीं मानते, दूसरा आस्तिकों का, जो जीवात्मा के शरीर से पृथक् होने को मृत्यु मानते हैं। तब मूर्धा, हृदय, फुफ्फुस, नेत्र, कर्ण, कण्ठादि सब अंग निज कार्य छोड़ देते हैं।

फुफ्फुसपरीक्षा की आवश्यकता कास, श्वास, क्षय, पार्श्वशूल (Pleurisy), कर्कटक सन्निपातादि ज्वरों में पड़ती है। एतदर्थ यन्त्र का वक्षोभाग छाती के दक्षिण भाग तथा पृष्ठ पर दोनों ओर ऊपर नीचे लगाकर फेफड़ों के शब्द वा श्वास प्रश्वास (Breathing Sounds) का ज्ञान होता है। फुफ्फुसपरीक्षा करते समय रोगी को 'मुख बन्द करके नासा द्वारा बलपूर्वक श्वास लो'—ऐसा आदेश करना चाहिए। वैद्य को पहिले स्वस्थावस्था में फेफड़ों के शब्द सुनने का अभ्यास कर लेना चाहिए, पुनः रोगावस्था का। तमक श्वास में श्वासप्रणालियों (जिन्हें चरकने 'श्वसना' कहा है) के तङ्ग होने के कारण वायु-संचार कठिनता से होता है और कूजन (Wheezing Sounds) सुनाई देता है। प्लूरिसी (पार्श्वशूल) में शब्द मन्द (Dull) होता है, एवं न्यूमोनिया (Pneumonia) की अन्तिम अवस्था में जब फुफ्फुस ठोस हो जाते हैं। जब श्लेष्मा अधिक हो, तो 'घुर-घुर' शब्द सुना जाता है। राजयक्ष्मा में फेफड़े का जो भाग दूषित (Affected) हो, उसमें 'चिट्-चिट्' शब्द (Crepitations) सुनने में आता है। वातिक कास में शब्द बलवान् सुनाई देता है। श्लैष्मिक कास में श्लेष्मा वा आर्द्रता का ज्ञान सुगमता से होता है। इत्यादि भाव अभ्यास से जाने जा सकते हैं।

हृदय वा फुफ्फुस के सम्यक् ज्ञानार्थ डा० त्रिलोकिनाथ कृत 'हमारे शरीर की रचना' अथवा म० म० श्री गणनाथसेन कृत 'प्रत्यक्षशारीर' और तत्संबन्धी रोगज्ञानार्थ डा० आशानन्द कृत 'व्याधिविज्ञान' देखें। अधिक व्याख्या इस पुस्तक की सीमा से बाहर है।

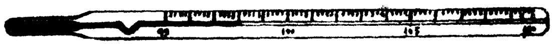
(१३) भ्रूण उरोवीक्षण यन्त्र (Mono-aural[1] Stethoscope)—चित्र ७८ में प्रदर्शित द्विमुखी नाड़ीयन्त्र भ्रूण की हृदयगति (Foetal heart sounds) जानने के लिये काम आता है। इस का उपरि



चित्र ७८ भ्रूण-उरोवीक्षण-यन्त्र

भाग (१) वैद्य अपने कर्णसे लगावे और निचला भाग (२) गर्भिणी स्त्री के उदर पर नाभि से नीचे रखे। यन्त्र को इतस्ततः लगाने से जहां शब्द सम्यक् प्रकार से सुनाई दे, वहां भ्रूण का हृदय समझना चाहिये।

(१४) तापमापक (Thermometer)—चित्र ७९ में शय्यागत तापमापक (Clinical Thermometer) दिखाया गया है, जो ज्वर



चित्र ७९ तापमापक (Thermometer)

में रोगी का तापमान (Temperature) जानने के लिये आजकल प्रयोग किया जाता है। यह एक काच की नली है, जिस में नीचे एक छोटे से कोष (Bulb) में पारद (Mercury) रहता है। शरीर स्पर्श से ऊष्मा के कारण पारद की परिवृद्धि (Expansion) होने से वह ऊपर नाली में चढ़ जाता है और शरीर ताप का बोध कराता है। एवं

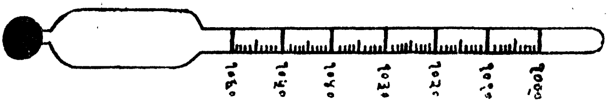
१. इस यन्त्र में एक कर्ण का प्रयोग होने से इसे Mono (एक) aural (कर्ण वाला) कहते है और दूसरे को Binaural Stethoscope (द्विकर्णी)।

यह एक निर्मुख नाडीयन्त्र है। इस में ९५ से ११०° तक अङ्क हैं, जो तापांश (Degrees) के बोधक हैं। एक अंश में पुनः ५ छोटी २ रेखायें होती हैं, जो .२ वा ⅕ भाग के तुल्य हैं। ९५° से नीचे एक छोटा सा वक्र (Curve) है, जो पारद को स्वयं नीचे उतरने से रोकता है। झटका देने से पारद शीघ्र उतर जाता है। प्रयोग से पूर्व तापमापक को जल से धोना और झटका देकर पारद को नीचे उतारना आवश्यक है। स्वस्थ मनुष्य का तापमान (जिह्वा के नीचे रखने से) ९८.४° वा ९८.६° फा० (98.4° or 98.6° F.) होता है। इससे अधिक तापांश ज्वर का बोधक है। इससे न्यून क्षीणता का। ९५° फा० से नीचे मृत्यु और ऊपर जीवन का चिन्ह है। तापमान के ज्ञान से ज्वर के प्रकार का भी बोध हो जाता है, यथा विषमज्वर (Malaria) में तापांश प्रायः १०५° तक वा कभी २ १०६° वा १०७° फा० तक पहुँच जाता है। अधिकतम तापांश ११३° फा० तक देखा गया है। मन्थर ज्वर (Typhoid) के दूसरे सप्ताह में प्रातः काल प्राय: १०३° फा० और सायं १०५° फा० होता है अर्थात् प्रातः सायं के तापमानों में २° का भेद देखा जाता है। राजयक्ष्मा में प्रातः ९९° फा०, सायं प्रायः १०१° वा १०२° फा० इत्यादि। पुनः तापांश का सम्बन्ध नाड़ी से भी है। पुरुषों में नाड़ी की गति प्रायः ७२ प्रति मिनट होती है। और विषम ज्वर में प्रति तापांश (Degree) ५ अधिक होती है, जैसे एक व्यक्ति का तापांश १०४.४° फा० है, अर्थात् स्वास्थ्य से ६ अंश ऊपर, उस की नाड़ी की गति (Beats) होगी ७२+६×५=१०२। एवं नाड़ी की गति से तापमान का बोध भी संभव है। यदि नाड़ी गति ९७ है, तो तापमान क्या होगा, बताओ! मन्थरज्वर में तापमान की अपेक्षा नाड़ीगति मन्द होती है। शिशु को तापमापक कक्षा वा वंक्षण सन्धि में लगाया जाता है। वहां का तापमान मुख की अपेक्षा एक अंश कम समझना चाहिये। अश्वादि पशुओं के लिये एक पृथक्

दीर्घ तापमान होता है, जिसे उनकी गुदा में लगाकर ज्वर के तापांश का बोध किया जाता है।

स्त्रियों की नाड़ी गति (Beats) प्राय: ८०, नवजात शिशु की ११०, १ वर्ष तक १००, एवं शनैः २ कम होती जाती है। परिश्रम करने पर हृदयगति (वा नाड़ीगति) बढ़ जाती है और विश्राम करने पर कम हो जाती है। नाड़ीपरीक्षण अथवा तापमापक वा उरोवीक्षण यन्त्र का प्रयोग विश्रामावस्था में करना चाहिये।

(१५) मूत्रमापक (Urinometer)—इस यन्त्र (चित्र ८०) से मूत्ररोगों विशेषतः मधुमेह का ज्ञान होता है। यह भी निमुंखी नाड़ी-

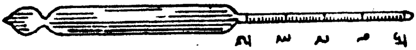


चित्र ८० मूत्रमापक (Urinometer)

यन्त्र है। इसके अधःकोष में पारद है और शेष नली वायुशून्य। इस पर १००० से १०६० तक अङ्क लगे हैं। यदि इसे जल में डालें, तो यह यन्त्र अङ्क १००० तक डूबेगा और स्वस्थ पुरुष के मूत्र में प्राय: १०१५ से १०२५ तक। इस का अर्थ यह है कि जल के १००० भागों में यदि १० भाग शर्करादि कोई पदार्थ घोल लें, तो इस में वह यन्त्र १०१० तक डूबेगा, २० भाग घोलें, तो १०२० तक, इत्यादि। एवं मूत्र वस्तुतः जल है, परन्तु उस में यूरियादि द्रव्य घुले हुए हैं। उनका जल से अनुपात इस यन्त्र द्वारा ज्ञात होता है। उदकमेह में मूत्रमापक प्राय: १००० तक डूबता है, जिसका अर्थ है कि रोगी का मूत्र केवल जल ही है, अतः ऋषियों ने उसे जलमेह (Diabetes insipidus–फीकी ज़याबतीस) कहा है। यह मूत्राशय तथा वृक्कों की दुर्बलता से होता है। यदि किसी के मूत्र में मूत्रमापक यन्त्र १०३० वा इस से अधिक अंक तक डूबे, तो जान लो कि उसे

मधुमेह (Diabetes Milletus—मीठी वा शर्करी ज़ियाबेतीस) है। अधिक अंक तक डूबने का भाव मूत्र में शर्करा की उपस्थिति है।

(१६) दुग्धमापक (Lactometer) चित्र ८१ में प्रदर्शित नाड़ीयन्त्र में ऊपर ज और नीचे द चिन्ह हैं और मध्य में १, २, ३



चित्र ८१ दुग्धमापक (Lactometer)

अंक। यदि इस यन्त्र को जल में डालें, तो यह ज तक डूबेगा और कच्चे शुद्ध दुग्ध में द तक। यदि दुग्ध में १ भाग जल मिला दो, तो ३ तक, २ भाग जल हो, तो २ तक, केवल १ भाग दुग्ध और ३ भाग जल, तो १ तक डूबेगा। इस में कुछ अपवाद भी हैं, उन के तथा तापमापकादि यन्त्रों के सम्यक् ज्ञानार्थ हमारी बनाई हुई भौतिकी (Physics) देखें। (पृष्ठ १६, २० और ७०)।

(१७) आश्च्योतक (Dropper)—यह नेत्र में तरल औषध बिन्दुशः डालने के लिये प्रयुक्त होता है। रबर को दबाने से वायु बाहर निकल जाता है और पुनः ढीला छोड़ने से तरल नली में भर जाता है। रबर को पुनः दबाने से औषध नेत्रों में बिन्दु २ करके (Drop by drop) गिरता है। यह कार्य कार्पास पिचु से भी ले सकते हैं। आश्च्योतक एकमुखी नाड़ीयन्त्र है।

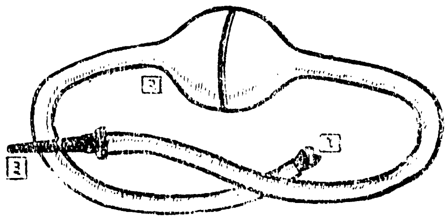
(१८) अंगुलित्राणक (Finger Guard)—यह एक हस्तिदन्त, काष्ठ वा धातुकृत कोष होता है, जिसे अंगुली पर रक्षार्थ चढ़ा दिया जाता है। वाग्भट ने उसे नाडीयन्त्रों में गिना है, यथा—"अङ्गुलीत्राणकं दान्तं वार्क्षं वा चतुरङ्गुलम्। द्विच्छिद्रं गोस्तनाकारं तद् वक्त्रविवृत्तौ सुखं ॥ २० ॥ (अ० हृ० सू० अ० ७)—यह चार अंगुल

खम्भा मुख के खोलने में काम आता है। आज कल इस प्रयोजन के लिये रबर कोष (Finger stall) प्रयुक्त होते हैं। तथा इन्हें पहन कर मलमूत्रादि को स्पर्श किया जा सकता है। एवं हस्तत्राण (Hand Gloves) सम्पूर्णहस्तरक्षार्थ भी आज कल मिलते हैं।

(१६) वस्तियन्त्र (Enema Syringe)—यह यन्त्र प्राचीन काल में अजादि पशुओं के मूत्राशय (वस्ति, Bladder) को शुष्क करके बनाया जाता था। उसके मुख में धातु, शृंग, वंश, हस्तिदन्त, नरसलादि की नाली, जिसे नेत्र (Nozzle) कहते हैं, देकर और सूत्रादि से बांधकर वस्ति (Enema) के लिये प्रयोग करते थे। इस में क्वाथ, स्नेहादि रोगानुसार भर दिया जाता था। वस्ति (मूत्राशय) से बनने के कारण ही इसे वस्ति संज्ञा दी गई थी। पुनः यह रूक्षवस्ति (विना वा अल्प स्नेहयुक्त) और स्निग्धवस्ति (केवल स्नेहयुक्त) दो प्रकार की मानी जाती थी। इनकी संज्ञा यथाक्रम निरूहण और अनुवासन वस्ति थी। वस्ति का वर्णन चरक के सिद्धिस्थान अ० ३ में, सु० चि० अ० ३५ में और वा० सू० अ० १६ में देखें। वस्ति तथा नेत्रादि की रचना वहाँ स्पष्ट रूप से दी गई है। एवं शा० उ० ख० अ० ५ में यह वचन मिलते हैं, "मृगाज-सूकरगवां महिषस्यापि वा भवेत्॥ मूत्रकोषस्य वस्तिस्तु तदलाभेऽन्यचर्मजः॥ १२ ॥ कषायरक्तः सुमृदुर्वस्तिः स्निग्धो दृढो हितः॥"—अर्थात्—मृग, अजा, शूकर, गौ और भैंसे के मूत्रकोष (Bladder) से वस्ति बनावे। यदि मूत्रकोष का प्रबन्ध न हो, तो अन्य चर्म से वस्ति यन्त्र तैयार करले। यह कषाय रंग से रंगी हुई, सुमृदु, स्निग्ध और दृढ़ होनी चाहिये। वस्तिनेत्र (Nozzle) स्त्री, पुरुष तथा आयुभेद से कैसा हो? यह वर्णन भी वहां अच्छी प्रकार किया गया है। वस्ति देने का प्रकार वाग्भट ने अति स्पष्ट रीति से वर्णन किया है। (देखो अ० हृ० सू० अ० १६ श्लोक २४ से ३२ तक)। मलयावार (Malabar) देश में मैंने वैद्यों को यह श्लोक

पढ़कर तदनुसार वस्ति देते देखा है।

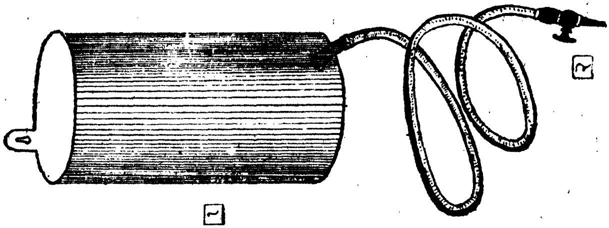
चित्र ८२ में रबर से निर्मित आधुनिक वस्तियन्त्र, जिसे Bulb Enema Syringe (बल्ब एनिमा सिरिंज—रबर की पिचकारी)



चित्र ८२ वस्तियन्त्र

कहते हैं, दिखाया गया है। इसके मध्य में एक रबर कोष (Bulb) है (देखो २)। उसका एक सिरा (१) पात्रस्थ जल, त्रिफलाक्वाथादि में डाल कर रबर कोष को दबाया जाता है, जिससे जल उसमें भर जाता है। दूसरा सिरा (३) गुदा में देकर बल्ब को पुनः दबाया जाता है, जिससे तरल मलाशय (Rectum) में प्रवेश करता है। रोगी को वाम पार्श्व पर लिटाया जावे और दक्षिण सक्थि को संकुचित करके नेत्र गुदा में देना चाहिए। शार्ङ्गधरानुसार इसे 'अन्यचर्मजः' वा 'रबरजः' समझना चाहिए। भाव दोनों का एक ही है। वस्तिनेत्र पुरुषों (Adults), बच्चों (Infants), और स्त्रियों (Females) के लिए भिन्न २ होते हैं। जल को पुनः पात्रमें लौटने से रोकने के लिए २ कपाट (Valve) लगे रहते हैं। अनुवासन (स्नेहवस्ति) Glycerine Syringe (ग्लैसरीन सिरिंज) से भी दे सकते हैं।

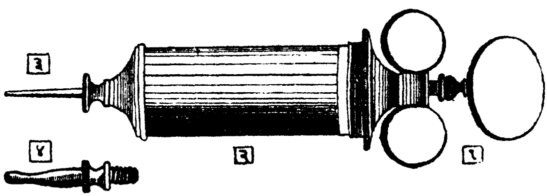
(२०) वस्तिकोष वा वस्तिपात्र (Irrigator or Douche Can)—यह लोहपात्र ही है, जिस पर श्वेत लेप (Enamel) चढ़ा हुआ है (देखो चित्र ८३, १)। इस में क्वाथादि तरल भर कर दीवार



चित्र ८३ वस्तिपात्र—(Irrigator)

के साथ कील पर लटका दिया जाता है। पात्र के अधोभाग में नली-मुख (Spout) से सम्बद्ध रबर की नाली द्वारा द्रव गुदा में प्रवेश करता है। यहाँ उपरिस्थ पात्र मूत्राशय (वस्ति) का कार्य करता है। रबर की नली को कुछ दबाना भी पड़ता है। नेत्र का पेच (२) घुमाकर क्रिया को समाप्त किया जाता है।

(२१) कर्णवस्ति (कान धोने की पिचकारी—Ear Syringe)—यह चित्र ८४ में दिखाई गई है। मध्यभाग (२) में एक स्थूल पिधान



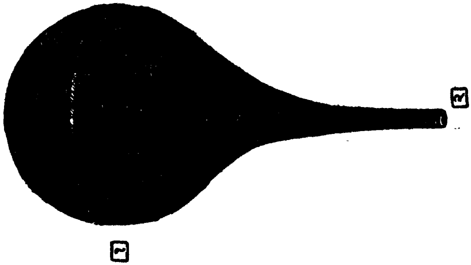
चित्र ८४ कर्णवस्ति (Ear Syringe)

(Piston) रहता है, जिसे चक्र (१) द्वारा ऊपर खैंचने से रिक्त स्थान (Vacuum) उत्पन्न होकर नेत्र (३) द्वारा जल मध्य भाग में भर

जाता है। पुनः पिधान को दबाने से द्रव धारा (वेग) से बाहर निकलता है। कर्ण को धोते समय अति बलवती धारा का प्रयोग उचित नहीं। कभी २ इससे कर्णपटह फट जाता है। (४) में स्थूल नेत्र दिखाया गया है। यह पिचकारियां २ और ४ औंस की मिलती हैं और व्रण-धावनार्थ भी प्रयुक्त होती हैं।

(२२) सूचीवेध वस्ति (Injection Syringe)—यह पिचकारी मध्य में काच और शेष धातुकृत होती है। प्रमाण में छोटी 1 c.c., 2c.c., 5c.c. इत्यादि मानों (Capacities) की मिलती हैं। इनके आगे सूची भी सूक्ष्ममुखी, परन्तु सच्छिद्र होती है, पिस्टन (पिधान) को ऊपर खेंचने से उस में तरल भर जाता है। त्वचा में देकर पिधान को दबाने से तरल भीतर चला जाता है। पूर्ण विधि किसी दक्ष से सीखो।

(२३) व्रणवस्ति (Rubber Bulb)--इसका मुख (२) जल में डालकर कोष (१) को दबाने और पुनः ढीला छोड़ने से इस में



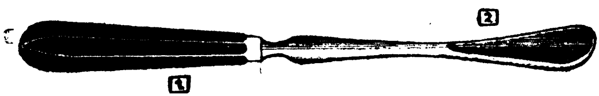
चित्र ८५ व्रणवस्ति

आश्च्योतक वा वस्तिवत् जल भर जाता है, और कर्ण, नेत्र, व्रणादि के धावनार्थ काम आता है।

(२४) उत्तरवस्ति (Urethral Douche)—पूयमेह, मूत्रकृच्छ्रादि में रोगियों को उत्तरवस्ति (मूत्रमार्ग में तरलप्रवेश) देनी पड़ती है। एतदर्थ सु० चि० अ० ३७ में श्लोक १००–१०१ देखो

और वाग्भट सू० अ० १६ में श्लोक ७२ से ७४ तक। उत्तरवस्ति की की निरुक्ति अरुणदत्त ने यों की है—"गुदादुत्तरेण मार्गेण दीयते इत्युत्तरवस्तिः।"–गुदा से दूसरी ओर अर्थात् मूत्रमार्ग से दी जाती है, अतः उसे उत्तरवस्ति कहते हैं। नेत्रप्रमाणादि का वर्णन ग्रन्थों में देखें। आज कल यह कार्य काचवस्ति (शीशे की छोटी पिचकारी) से किया जाता है। इसे तरल से भर कर और मेढ़्के छिद्र (Meatus of the Penis) में देकर पिधान को दबाने से तरल मूत्रमार्ग (Urethra) में प्रवेश करता है। पिचकारी देते समय शिश्नमुण्ड को दृढ़ता से पकड़े रहना चाहिये। तनिक प्रतीक्षा के अनन्तर पिचकारी हटाने पर तरल निकल जाता है। एवं कई बार करने से क्रिया सम्पूर्ण होती है।

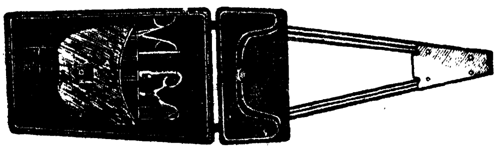
(२५) अश्मरीतालक यन्त्र (Lithotomy Scoop)—यह



चित्र ८६ अश्मरीतालक यन्त्र १ मुष्टि २ ताल (Scoop)

अश्मरी निकालने का तालयन्त्र है (देखो पृष्ठ २४–२५)। किसी कारणवश यह पहिले नहीं दिया जा सका।

(२६) शस्त्रकोश (Instruments Bag)—यन्त्र, शस्त्रादि बनवा कर कहां और किस प्रकार सुरक्षित रखे जावें? यह भाव भी



चित्र ८७ शस्त्रकोश (Instruments Bag)

श्री वाग्भट ने शस्त्रकोश का उल्लेख करके भली भान्ति दर्शाया है,

यथा—"स्यान्नवाङ्गुलविस्तारः सुघनो द्वादशाङ्गुलः ॥ क्षौम-पत्रोर्ण-कौशेय-दुकूल-मृदुचर्मजः ॥ ३५ ॥ विन्यस्तपाशः सुस्यूतः सान्तरोर्णस्थ-शस्त्रकः । शलाकापिहितास्यश्च शस्त्रकोशः सुसंचयः ॥ ३६ ॥" (अ० हृ० सू० अ० २६)— ९ अंगुल चौड़ा, १२ अंगुल लम्बा, घन (मोटा वा स्थूल), रेशम, मृदुपत्र, ऊन, चर्मादिकृत, पाश से युक्त, अच्छी प्रकार सिला हुआ, भीतर में ऊन की गदियां शस्त्र रखने के लिये लगी हों, और जिसका मुख शलाका लगाकर बन्द किया जा सके—ऐसा सुसंचय (सुन्दर शस्त्रसंचय से युक्त) शस्त्रकोश बनाना चाहिये। चित्र ८७ में प्रदर्शित शस्त्रकोश वाग्भटोक्त, परन्तु किंचित् परिवर्त्तित समझें।

(२७) यन्त्रशस्त्रसुसंचय—कुछ प्रायोगिक यन्त्र-शस्त्रों का संचय पुस्तकारम्भ में दिखाया गया है। पाठक उन्हें पहचानने का यत्न करें, कि कौन सा यन्त्र वा शस्त्र किस नाम वाला और कैसे व्यवहार में लाया जा सकता है।

(२८) यन्त्रशोधनविधि (Purification or Sterilisation of Instruments)—यन्त्रों तथा शस्त्रों को सदैव मल-रहित, स्वच्छ और शुद्ध (Sterilised) रखना चाहिये। एक रोगी पर कोई यन्त्र वा शस्त्र व्यवहार करके दूसरे पर बिना शोधन प्रयोग नहीं करना चाहिये, अन्यथा संक्रम (Infection) की संभावना है। शोधन यथायोग्य करना चाहिये, जैसे तापमापक को केवल जल से, वस्तियन्त्रादि को गरम रसांजन जल से, यन्त्र निंबक्वाथ, सुतप्त जल, पारद विलयन (Mercury lotion), त्रिफला वा वचा क्वाथ, कारबालिक विलयन (१ : २०) आदि में और शस्त्र उक्त द्रवों में वा केवल जल में उबालने से भी शुद्ध कर सकते हैं। मद्यसार (Methylated spirit) में डुबोकर भी यन्त्र तथा शस्त्र साधारणतया शुद्ध हो जाते हैं, परन्तु बृहत् शस्त्रकर्मों (Major Operations) के लिये

उन्हें वाष्प-यन्त्रशोधक (Steam Steriliser) द्वारा अथवा शोधनकटाह (Sterilising Kettle) आदि द्वारा शुद्ध करना चाहिये ।

(२६) संज्ञानाश (Aneasthesia)—साधारण वा लघु शस्त्रकर्म (Minor Operations) तो रोगी को मूर्च्छित किये बिना हो सकते हैं, उन में भी कहीं २ संज्ञानाश आवश्यक होता है, परन्तु वृहत् शस्त्रकर्मों में तो संज्ञानाश अनिवार्य है । राजा भोज के समय में शिरोगत शस्त्रकर्म का वर्णन है । उस में संज्ञानाशार्थ सम्मोहनी और संज्ञोत्पादनार्थं संजीवनी औषधि का लेख है । पुनः सु० सू० अ० १७ में "मद्यपं पाययेन्मद्यं तीक्ष्णं योऽवेदनासहः ।······मत्तः शस्त्रं न बुध्यते ॥१३॥"—यह वचन स्पष्ट करते हैं कि प्राचीन काल में जब रोगी वेदना न सह सकता था, तो तीक्ष्ण मद्य (Strong Wine) पिला देते थे, जिस से मद उत्पन्न होकर रोगी में पीड़ा को सहन करने की शक्ति प्राप्त होती थी । सुरा (Alcohol) पाने के कुछ देर के उपरान्त मूर्धा पर प्रभाव पड़ता है, जिस से रोगी मूर्च्छित हो जाता है । आजकल क्लोरोफार्म (Chloroform) सुंघाकर मूर्च्छा उत्पन्न की जाती है । यह क्लोरोन (Chlorine) गैस और सुरा (Alcohol) के संयोग से बनता है । मधुरगन्धि होने से इसे रोगी सूंघ लेता है, परन्तु इस के उपद्रव (वान्ति, हृदयसादादि) भयंकर होते हैं, अतः उसे सुरा और ईथर (Ether) से मिला कर सुंघाते हैं । इस मिश्रण को डाक्टर A.C.E. Mixture (अनुपात १ : २ : ३) कहते हैं । एवं दांतों के निकालते समय ईथर धारा (Ether Spray) का प्रयोग करते हैं । यह भी स्थानिक संज्ञानाशक (Local Anea-sthetic) है, एवं कोकेन (Cocaine) । इन्हीं वस्तुओं के कारण ही आधुनिक शस्त्रज्ञान उन्नत हुआ है । सुश्रुतोक्त तीक्ष्ण मद्य का पिलाना और अब तीक्ष्ण मद्य का सुंघाना—दोनों में अवश्य सामान्य है ।

मूर्धा पर प्रभाव दोनों अवस्थाओं में होता है। प्राचीन काल में विजया (भांग) और धत्तूर भी इस कार्य के लिए प्रयुक्त होते थे।

(३०) यन्त्रशस्त्रशिक्षा (Training in the Use of Instruments)—एतदर्थ सुश्रुत ने योग्यासूत्रीय अध्याय की रचना की, परन्तु इस से हमें पूर्ण शिक्षा न मिलेगी, जब तक हम किसी शस्त्रकर्मदक्ष धन्वन्तरि (Surgeon) से शिक्षा न लें। शल्यविज्ञान की उन्नति के लिये हमें अवश्य डाक्टरों से शिक्षा लेनी चाहिये, पुनः अभ्यास से हम आगे बढ़ सकते हैं। शिक्षा लेने में कोई संकोच न करना चाहिये। चरक ने विमान स्थान अ० ८ में लिखा है, "कृत्स्नो हि लोको बुद्धिमतामाचार्यः शत्रुश्चाबुद्धिमताम्।" इति।

प्रश्नसूची (**Questions**)

१. घटीशृंगालाबूनां परस्परभेदपुरःसरं प्रयोगविधिं लिखत।

२. स्तन्यचूषकस्याकृतिं चित्रयित्वोपयोगप्रकारं विशदयत।

३. किं नाम वस्तियन्त्रं, कतिविधं च तत्? तन्निर्माणप्रकारः शास्त्ररीत्या निर्देश्यः। वस्तिप्रयोगः कथं क्रियते? तत् सम्यङ्निरूपयत। अर्वाचीनवस्तियन्त्राणामपि चित्रप्रदर्शनपूर्वकं वर्णनं कुरुत।

४. उरः केन यन्त्रेण परीक्ष्यते? तदाकृतिप्रयोगप्रकारेऽपि लेख्ये। भ्रूणहृत्पिण्डपरीक्षाविधिः कः?

५. ज्वरितस्य तापज्ञानार्थं किं यन्त्रं कथं च व्यवह्रियते? कियच्च तापमानं स्वास्थ्ये? तत्र नाडीगतिः कीदृशी?

६. शुद्धाशुद्धपयोनिश्चयार्थं मधूदकभेदज्ञानार्थं च के यन्त्रे प्रयुज्येते? तयोराकृतिं प्रयोगविधिं च सम्यग् विशदीकुरु।

७. नासादर्शकयन्त्रं कीदृक् कथं च तत् प्रयुज्यते ?

८. शस्त्रकर्मसौकर्यार्थं संज्ञानाशोपायाः के ? प्राचीनार्वाचीनभेदपुरःसरं तत् सम्यग्वर्णयत ।

९. यन्त्रशस्त्रशोधनप्रकारः कीदृक् ? किं खलु वाष्पशोधनयन्त्रम् ? शस्त्रकोशनिर्माणप्रकारोऽपि लेख्यः ।

१० अधोलिखितयन्त्रशस्त्राणां सामान्यपरिचयो देयः—

योनिव्रणेक्षणयन्त्रं, नासार्बुदी शलाका, उत्तरवस्तियन्त्रं, एषणी, अर्शोयन्त्रं, शम्याख्यं यन्त्रं, सर्पफणी शलाका, सूच्यश्चेति ।

आवश्यक सूचना—अध्यापक इस विषय को पढ़ाते समय पुस्तक में प्रदर्शित यन्त्रशस्त्र यथासम्भव एकत्र करके छात्रों को दिखावें और प्रयोग समझावें । एवं परीक्षक भी शल्यशालाक्य के प्रश्नपत्रों में तत्सम्बन्धी प्रश्न पूछें । और मौखिक परीक्षा में भी परीक्षक महोदय कुछ यन्त्रशस्त्र दिखा कर उन का नाम, उपयोगप्रकारादि पूछें । तभी आयुर्वेदीय छात्र भी शल्यविषय पर ध्यान देंगे । प्रत्येक आयुर्वेदीय संस्था में एक धन्वन्तरि विभाग (Dhanwantri Ward) होना चाहिये ।

यदि कोई यन्त्रशस्त्र चाहिये, तो हम से मंगवा लें :—